(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के हस्तलिखित गुटकों से)

जिन-स्तोत्र-संग्रह

विरचित

अनुवादित

सम्पादित

सिदधान्ताचार्य

पंडित हीरालाल शास्त्री (ब्यावर)

हीराश्रम, साढ़ूमल जिला-ललितपुर (उ0प्र0)

दो शब्द

आदरणीय पण्डित जी के स्थितिकाल में प्राचीन आचार्यों द्वारा प्रणीत साहित्य का विशाल भाग प्रकाश में नहीं आ सका था । बहुत आवश्यकता थी विविध शास्त्र भण्डारों में बन्द, दीमक भक्षित होते हुए यत्र-तत्र विकीर्ण जैन साहित्य के संग्रहण पूर्वक उनके भाषा रूपान्तरण एवम् आधुनिक पद्धति के अनुकूल सम्पादनोपरान्त प्रकाशन की । पण्डित जी ने ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन में सेवा के माध्य से विकीर्ण साहित्य के संग्रह एवं संरक्षण में तो अपनी पहली भूमिका निभायी। साथ ही, विशाल परिमाण में प्राचीन जैन साहित्य का सम्पादन एवं अनुवादन कर उन्हें प्रकाशित कराया। विशेष बात यह है कि विषय विवेचन की सूक्ष्मता एवम् प्रतिपादन के विस्तार वाले जैनाचार्य प्रणीत ऐसे ग्रन्थ महार्णवों का भी कार्य हाथ में लेने से पण्डित जी नहीं घबराए, जिन्हें देख अच्छे-अच्छे विद्वानों का भी गर्व खर्व होने लगता है।

हीराश्रम साढ़ूमल (ललितपुर) में श्रुताराधन करते हुए पूज्य पण्डित जी सन 1981 की फरवरी मास में परलोक सिधार गये, उनकी पुदगलमयी काया तो पुद्गल में विलीन हो गयी, परन्तु उनके द्वारा अनूदित, व्याख्यात एवम् सम्पादित ग्रन्थ-रचनाओं के माध्यम से वे सहित्य जगत में सदाअमर रहेंगे, उनके द्वारा किये गये कार्य विद्वजगत् प्रकाश स्तम्भ बनकर साहित्योद्धार की दिशा में सदा प्रदर्शक बने रहेंगे ।

प्रसन्नता का विषय है कि पणडित जी के सुयोग्य पुत्रों द्वारा उनके द्वारा संकलित अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों के प्रकाशन का कार्य किया जा रहा है, इसी श्रृखला में - “गुटकों का जिन-स्तवन संकलन भावार्थ सहित” आज आपके समक्ष प्रस्तुत है। जो साहित्य जगत् के लिये एक नया आयाम होगा ।

अरुण कुमार जैन (ब्यावर)
जैन दर्शन व्याकरणाचार्य

प्रस्तावना

स्तव (स्तुति-)स्तोत्र - 1- तीर्थंकरों के गुणों का कीर्तन करना स्तव, स्तवन या स्तुति कहलाता है अथवा अतीत, अनागत और वर्तमान काल विषयक पांच परमेष्ठियों के भेद को न करके 'अरहन्तों को नमस्कार हो, जिनों को नमस्कार हो' इस प्रकार नमस्कार करना स्तव या स्तुति है।

मन से चौबीस तीर्थंकरों के गुणों का स्मरण करना, वचन से श्लोकों में कही हुई तीर्थंकर स्तुति बोलना और ललाट पर हाथ जोड़कर जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करना ऐसे चतुर्विंशति स्तवन के तीन भेद हैं। 1-नाम, 2-स्थापन, 3-द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव।

स्तवन के भेद से चौबीस तीर्थंकरों के स्तवन के छह भेद हैं। चौबीस तीर्थंकरों के गुणों का अनुसरण करने वाले उनके एक हजार आठ नामों को ग्रहण करना नाम स्तवन है।

तीर्थंकरों के समस्त गुणों को धारण करने वाली जिन प्रतिमाओं के स्वरूप का कीर्तन करना स्थापना स्तवन है।

जो समस्त दुःखों से रहित हैं, स्वस्तिक आदि चौंसठ लक्षणों से युक्त है, शुभ संस्थान व शुभसंहनन वाले हैं, सुवर्ण दण्ड से युक्त चौंसठ चमरों से सुशोभित हैं और जिन का वर्ण शुभ है ऐसे चौबीस तीर्थंकरों के शरीर के स्वरूप का अनुसरण करते हुए कीर्तन करना द्रव्य स्तवन है।

तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म आदि कल्याणको के द्वारा पवित्र हुए नगर, वन, पर्वत आदि के वर्णन (कीर्तन) करने को क्षेत्र स्तवन कहते हैं।

तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण कल्याणको की प्रशस्त क्रियाओं से जो महत्ता को प्राप्त हो चुका है , ऐसे काल (समय) का वर्णन करने को काल स्तवन कहते हैं।

तीर्थंकरों के अनन्तज्ञान , अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तसुख, क्षायिक सम्यकत्व, अव्याबाध और वीतरागता आदि गुणों का अनुसरण करते हुए कीर्तन करना भाव स्तवन है।

2- समस्त अंग ज्ञान सम्बन्धी अर्थ को विस्तार या संक्षेप से विषय करने वाले शास्त्र को स्तव कहते हैं अथवा बारह अंगों में से एक अंग के उपसंहार का नाम स्तव या स्तुति है यह अंगबाह्य श्रुतज्ञान का एक भेद है।

हमारे प्राचीन आचार्यों के द्वारा प्रणीत साहित्य में समय-समय पर नाम, स्थापन, द्रव्य क्षेत्र काल भाव और समस्त अंग ज्ञान के आधार पर स्तुति स्तोत्र आदि की रचनाएं प्राकृत भाषा में की हैं। जिसका संकलन भाव सहित अनुवादन सम्पादन पण्डित जी ने किया है।

विषय सूची

क्रम	विषय	विरचित	अनुवाद/पद्यानुवाद	पेज नं0
1-	श्री वर्धमान स्तोत्र (1)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
2-	श्रीवर्धमान स्तवन (2)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
3-	श्री वर्धमान स्तोत्र (3)	श्री विशालकीर्ति	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
4-	नमस्काराष्ट स्तोत्र		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
5-	श्री गोम्मटेश्वर-स्तुति		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
6-	श्री पंच परमेष्ठि स्तोत्र		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
7-	पंचनमस्कार स्तवन	श्री उमास्वामी	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
8-	अद्याष्टक स्तोत्र	श्री अनन्त कीर्ति	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
9-	जिनेन्द्र वन्दना	श्री जिनचन्द्र देव	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
10-	स्वस्ति मंगल विधान	श्री नरेन्द्रसेन सूरि	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
11-	सुप्रभात स्तोत्र (1)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
12-	सुप्रभाताष्टक (2)	श्री नेमिचन्द्र यति	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
13-	सुप्रभाताष्टक (3)	श्री वीरसेन	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
14-	सुप्रभाताष्टक (4)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
15-	सुप्रभात स्तवन (5)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
16-	श्री जिनेन्द्र भक्ति स्तोत्र		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
17-	चतुर्विशति तीर्थंकर स्तुति (1)		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
18-	चतुर्विशति जिनस्तवन (2)	श्री पद्मनन्दि	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
19-	चतुर्विशति जिनस्तवन (3)	श्री माघनन्दिव्रति	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	
20-	चतुर्विशति-तीर्थंकर-मंगलस्तवन		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री	

21- श्री शान्तिनाथ- स्तवन श्री श्रुत सागर श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

22- श्री शान्तिनाथ स्तोत्रम्

23- श्री शान्तिनाथस्तवनम् श्री गुणभद्र

24- चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तवनम्

25- श्री पार्श्वनाथस्तवनम्

26- श्रीनिरञ्जनसतोत्रम्

27- वीतराग- स्तवनम्

28- वीतराग-स्तोत्रम् श्री पद्मनन्दी

29- परमानन्दस्तोत्रम्

30- भावनापद्धति-अपरनाम-चतुस्त्रिंशिका स्तोत्रम् श्री पद्मनन्दी

31- श्री वैराग्य मणिमाला श्री विशालकीर्ति यति

32- पञ्चाक्षरमयी-देवताराधनाष्टकम्

33- अनादिनिधनस्तवनम्

34- सरस्वती स्तवनम् श्रीपूज्यपाद स्वामि

35- भारती स्तुतिः

पद्यानुवाद

36- शान्तिनाथाष्टक श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

37- इष्टोपदेश श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

38- सामायिक पाठ आचार्य अमितगति श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

39- श्री कल्याण आलोचना श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

40- स्वयम्भू स्तोत्र आ0 समन्तभद्र श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

41- षोड़श कारण भावना पूजा श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

42- उत्तराध्ययन का दशम अध्ययन श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

43-	नियमसार	आ0 कुन्द कुन्द	श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री
44-	पंचाध्यायी के नय प्रकरण का दोहानुवाद		श्री पण्डित हीरा लाल शास्त्री

1- श्री वर्धमान स्तोत्रम् (1)

1- विद्यास्पदार्हन्त्य-पदंपदं पदं- प्रत्यग्रसत्पद्य-परं परं परम् ।

हेयेतराकार-बुधं बुधं बुधं वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम् ।।

भावार्थ- समस्त विद्याओं के स्थान स्वरूप परम उत्कृष्ट आर्हन्त्य पद को जिन्होंने प्राप्त किया है, जो आर्हन्त्य पद परम सम्पदा का सर्वश्रेष्ठ आश्रय है, जो बुध-जनों को हेय और उपादेय ज्ञान कराने वाला है और सारे विश्व का हित-कारक है, ऐसे आर्हन्त्य पद को प्राप्त करने वाले वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।1।।

2- दिव्यं वचौ यस्य सभा सभा सभा निपीद पीयूषमितं मितं मितम् ।

बभूव तुष्टा ससुरासुरा सुरा वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम ।।

भावार्थ- जिनके दिव्य अमृतमयी परिमित वचनों का पान करके देव और असुरों से युक्त वह समवशरण-सभा तृप्त हुई, उस विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।2।।

3- शत्रुप्रमाणेरजिता जिता जिता, गुणावली येन घृता घृता घृता ।

संवादिनं तीर्थकरं करं करं, वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम् ।।

भावार्थ- शत्रु-जनों के द्वारा नहीं जीती जाने वाली गुणावली को जिन्होंने धारण किया, जो सद्धर्म की उद्घोषणा करने वाले तीर्थंकर पद के धारक हैं, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।3।।

4- मयूखमालीव महामहा महा लोकोपकारं सविता विताविता ।

विभाति यो गन्धकुटि कुटि कुटि वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम् ।।

भावार्थ- जिनकी गन्धकुटि लोकोपकारक सूर्य की महा मयूख-(किरण-)माला के समान परम शोभायमान हो रही है, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।4।।

5- साराग संस्तुत्यगुणं गुणं गुणं समाजयिष्णुं स शिवं शिवं शिवम् ।

लक्ष्मीवतां पूज्यतमं तमं तमं वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम ।।

भावार्थ- जिनके गुण अनुरागी जनों के द्वारा सदा स्तुत्य हैं, सारी सभा के हृदयों को जीतने वाले हैं, परम शिव-स्वरूप हैं, जो लक्ष्मीवन्त जनों के अति पूज्य हैं, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।5।।

6- सिद्धार्थ-सन्नन्दनमा नमा नमा-नन्दा ववर्षे द्युसदा सदा सदा ।

यस्योपरिष्टात् कुसुमं सुमं सुमं वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम ।।

भावार्थ- जो सिद्धार्थराजा के सुनन्दन हैं, परम माननीय हैं, जिनके ऊपर देवगण ने सदा आकाश से पुष्पों की वर्षा की है, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।6।।

7- प्रत्यक्ष मध्यैदचितं चितं चितं यो भेयमर्थ सकलं कलं कलम् ।

व्यपेतदोषावरणं रणं रणं वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम ।।

भावार्थ- जिनके प्रत्यक्ष ज्ञान में सर्व जानने योग्य सचेतन-अचेतन पदार्थ प्रतिबिम्बित हो रहे हैं और जो समस्त रागादि दोषों के आवरण से रहित हैं, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।7।।

8- युक्त्या गमाबाधगिरं गिरं गिरं चित्रीयिताख्येयभरं भरं भरम् ।

संख्यावतां चित्तहरं हरं हरं वीरं स्तुवे विश्वहितं हितं हितम ।।

भावार्थ- जिनकी वाणी युक्ति और आगम से अबाधित है,....जो बुद्धिमन्तों के चित्त को हरने वाली है, ऐसे विश्व-हितैषी वीर प्रभु की मैं स्तुति करता हूं ।।8।।

9- अध्यैष्टा गममध्यगीष्टपरमं शव्दं च युक्तिं विदा-

न्चक्रे यः परिशीलतारिमदभिद्दे वागमालंकृतिः।

विद्यानन्दिभुवाभरादियशसा तेनामुना निमितं,

वीरार्हत्परमेश्वरीय-यमक स्तोत्राष्टकं मंगलम् ।।

भावार्थ- जिसने आगम का अधययन किया, शब्दशास्त्र (व्याकरण) और विद्वानों की परम युक्तिरूप न्यायशास्त्र को पढ़ा, जिसने परमतावलम्बी वादियों के मद को भेदन करने

वाली देवागम स्तोत्र की अलंकृतिरूप अष्टसहस्त्री को रचा, उस अमर यशस्वी विद्यानन्दि के द्वारा श्री वीर अर्हन्त परमेश्वर का यह मंगलमय यमक स्तोत्राष्टक रचा गया।।9।।

10- भट्टारकैः कृतं स्तोत्रं य पठेद्यमकाष्टकम् ।

सर्वदा स भवेद् भव्यो भारतीमुखदर्पणः ।।

भावार्थ- भट्टारकों के द्वारा रचित यह यमकाष्टक स्तोत्र जो भव्य पुरुष सदा पढ़ता है, वह सरस्वती के मुख का दर्पण होता है ।।10।।

2- वर्धमानस्तवनम् (2)

1- यस्यार्चनं देवपतिश्चकार ज्ञानत्रयालंकरणैकहेतोः ।

गर्भस्थितस्यापि विशुद्धर्त्तोमूस्तं वीरनाथं प्रणमामि नित्यम् ।।

भावार्थ- मति, श्रुति और अवधि इन तीन ज्ञानों से अलंकृत और गर्भ में स्थित होने पर भी विशुद्ध मूर्तिवाले जिस भगवान् का अर्चन-पूजन इन्द्रों ने किया, उन श्री वीरनाथ को मैं नित्य नमस्कार करता हूं ।।1।।

2- यो देवराजैः स्नपितो गिरीन्द्रे यो अलंकृतो वस्त्रविभूषणेन ।

यः प्रार्चितो भव्यजनेन भावात्तं वीरनाथं प्रणमामि नित्यम् ।।

भावार्थ- जन्म लेने पर जिसका अभिषेक सुमेरु पर्वतराज पर देवेन्द्रों ने किया, जो इन्द्राणी द्वारा वस्त्राभूषणों से विभूषित किये गये और भव्यजनों के द्वारा भावपूर्वक जिनकी पूजा की गई, उन श्री वीरनाथ को मैं नित्य नमस्कार करता हूं ।।2।।

3- येन स्वयं राजपदं विहाय संसारमार्ग च खिलं निरीक्ष्य ।

तपो गृहीत्वा चरितं चरित्रं तं सन्मतिं नौमि सदा त्रिधा अहम् ।।

भावार्थ- जिन्होंने स्वयं राजपद को छोड़कर और संसार के मार्ग को देखकर तप को ग्रहण कर चारित्र का पालन किया, उन सन्मति देव को मैं सदा मन वचन काय से नमस्कार करता हूं ।।3।।

4- यस्योपसर्गेण बभूव पुण्यादनन्तरोषेण कृतो भवेन ।

येनामरादिन्द्रबलं बभुञ्जे तं नौमि भावेन महातिवीरम् ।।

भावार्थ- अनन्त रोष वाले महादेव के द्वारा जिनके ऊपर महान उपसर्ग किया, किन्तु जिनके पुण्य से वह भी आश्चर्य-चकित हुआ और महातिवीर नाम रखकर जिसने प्रभु का गुणगान किया, जिन्होंने देव और इन्द्रों से भी अधिक बल को भोगा, उन महातिवीर भगवान् को भाव से नमस्कार करता हूं ।।4।।

5- येनाशुभं कर्म भवान्तरेण चिरन्तनेना अअ र्यतमान्तरंगात् ।

निराकृतं दुस्सहसंयमाभ्यां सदा महावीरजिनं नमामि ।।

भावार्थ- जिन्होंने चिरकालीन भवान्तरों से आये हुए अशुभ कर्मों को दुःसह तपश्चरण और संयम के द्वारा अपने अन्तरंग से दूर किया, उन श्री महावीर जिनको मैं सदा नमस्कार करता हूं ।।5।।

6- यस्या अअ गमे जन्मनि चार्धवर्ष -नवापि मासान् घनदश्चकार ।

सिद्धार्थराज्ञो भवने अर्थवृष्टिं, शक्राज्ञया तं प्रणमामि वीरम् ।।

भावार्थ- जिनके गर्भ में आने के छह मास पहिले से लगातार जन्म होने तक लगातार पन्द्रह मास इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने सिद्धार्थ राजा के महल में रत्न-सुवर्णरूप धन की वर्षा की उन श्री वीर प्रभु को मैं नमस्कार करता हूं ।।6।।

7- सुवर्णवर्णो हरिवंशजन्म द्वयाधिकं सप्ततिवर्षमायुः ।

यस्योच्चता सप्तकरप्रमाणा जगत्पतिं तं प्रणमामि वीरम् ।।

भावार्थ- जिनका सवर्ण सदृश वर्ण था हरिवंश में जन्म हुआ था, बहत्तर वर्ष की आयु को जिन्होंने पाया था, जिनके शरीर की ऊंचाई सात हाथ प्रमाण थी, उस जगत्पति श्री वीर प्रभु को मैं प्रणाम करता हूं ।।7।।

8- येना अअ स्वाद्य महत्सुखं विजयिना चारित्रमंगीकृतं,

येन ज्ञान दृशा चराचरमयं दृष्टं जगद्धेलया ।

तस्या अअ सीत्समवसृतिस्त्रिजगतामाधारहेतोः स्वयं,

यक्षेण प्रतिभापरेण रचिता क्रोशैश्चतुर्भिः क्रमात् ।।

9- दत्वोपदेशं च विहृव्य भूमौ ततार भव्यांश्र्च बहून् सुनावा ।

पावापुरीतश्र्च जगाभ मोक्षं तस्मै नमो वीर जिनाय सुभक्त्या ।।

भावार्थ- जिस काय विजयी ने संसार के महान सुखों का उपभोग कर चारित्र को अंगीकार किया, जिसने अपने ज्ञान-दृष्टि के द्वारा इस चर-अचर जगत् को हेला भाव से देख लिया, जिसका समवशरण तीन जगत् के प्राणियों के लिए आधारभूत था और जिसे प्रतिभाशाली कुबेर यक्ष ने स्वयं वीर कोश-प्रमाण विस्तृत रचा था, ऐसे ऐश्वर्यशाली वीर भगवान् ने समवशरण में सभागत भव्य जीवों को धर्म का उपदेश देकर, पुनः भूमण्डल पर विहार अपनी धर्मरूप उत्तम नौका के द्वारा अनेकों भव्य जीवों को संसार-सागर से पार उतारा। अन्त में जो स्वयं पावापुरी से मोक्ष पधारे, उन श्री वीर जिनेन्द्र सुभक्ति से मेरा नमस्कार ।।8-9।।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

3- श्री वर्धमान स्तोत्रम् (3)

1- जननजलधिसेतुर्दुःखविध्वंस हेतु-र्निहतमकरकेतुर्वारितानिष्टहेतुः ।

कुमत शमनहेतुर्नष्टनिः शेषधातु र्जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जो संसार-सागर को पार करने के लिए सेतु (पुल) के समान हैं, दुःखों के विध्वंस के हेतु हैं, जिन्होंने मकर केतु (कामदेव) को विनष्ट कर दिया है, जो जीवों के अनिष्ट कारणों के निवारक हैं, मिथ्यामतों के शमन के हेतु हैं, और समस्त धातुओं (शारीरिक और आत्मिक विकारों) के विनाशक हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।1।।

2- समय-सदनकर्त्ता असार संसारहर्ता सकलभुवनकीर्त्तः भूरिकल्याणधर्त्ता ।

परमसुखसमर्त्ता सर्वसन्देह-हर्त्ता जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जो परमागम रूप समय के प्रणेता हैं, असार संसार के हर्ता हैं, जिनकी कीर्ति सकल त्रिभुवन में व्याप्त है, जो भारी कल्याणों के धारक हैं, परम सुख के दाता और भोक्ता हैं, सर्व सन्देहों के हर्ता हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।2।।

3- कुगतिपथविनेता मोक्षमार्गस्य नेता, प्रकृतिगहनहन्ता तत्त्वसंघातमन्ता ।

गगनगमनगन्ता मुक्तिरामाविरन्ता जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जो कुगतियों के मार्ग के अपनयन करने वाले हैं, मोक्षमार्ग के प्रणयनकर्त्ता हैं, कर्मप्रकृतिरूप गहन(वन)के विनाशक हैं, तत्त्वों के समूह के उपदेष्टा हैं, आकाश में गमन करने वाले (गगन-गमन-विहारी) हैं, और मुक्ति-रामा के अभिरन्ता हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।3।।

4- पर-बलबलसालो मुनिकान्तारसालो विमलगुणनिरालो नीतिकल्लोलमालः ।

विगतशरणलीलो धारितानन्तशीलो जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- पर-बल (कर्मरूप सेना) के बल के विनाशक हैं, मुक्ति-कान्ता के रसास्वादी हैं, निर्मल गुणों से भर-पूर हैं, नय-नीतिरूप कल्लोल-माला के धारक हैं, अशरणों के शरणदाता हैं, और अनन्तशील के धर्त्ता हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।4।।

5- सजलजलदनादो निर्जिताशेषवादो यतिपतिनुतपादो वस्तु तत्त्वं जगाद ।

जयति भुवि कृपादो अनेककोपाग्निमेघो जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जिनकी ध्वनि सजल मेघ के नाद (गर्जन) के समान हैं, जो समस्त वाद-प्रवादों के विजेता हैं, जिनके चरण-कमल यतियों (साधुओं) के पतिथों-गणधर एवं आचार्यों नमस्कृत हैं, जिन्होंने वस्तु के वास्तविक तत्त्व को कहा है, जगत में दया के दाता हैं, और जो सर्व प्रकार की क्रोधरूप अग्नि के शान्त करने के लिए मेघ के समान हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।। 5।।

6- मदनमदनिवारी चारुचारित्रधारी, नरकगतिनिवारी स्वर्गमार्गावतारी ।

नृ-सुरनयन-हारी केवलज्ञानधारी जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जो कामदेव के मद-विनाशक हैं, सुन्दर चारित्र के धारक हैं, नरकगति के निवारक हैं, स्वर्ग-मार्ग के अवतारी हैं, मनुष्य और देवों के नयन-हारी हैं, तथा केवलज्ञान के धारी हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत में जयवन्त हैं।।6।।

7- विषयविषविनाशो भूरिभाषानिवासो गतभवभयपासो कीर्तिवल्ली-निवासः ।

करणसुखनिवासो वर्णसम्पूर्णतासो जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- जो इन्द्रियों के विषय-भोगरूप विष के विनाशी हैं, अनेक भाषाओं के निवास स्थल हैं, संसार के भव-पास से रहित हैं, कीर्तिरूपी बेलि के निवास (आधार भूत) हैं, करण-परिणामों से उत्पन्न हुए आत्मिक सुख में निवास करने वाले हैं, और सम्पूर्ण वर्णों से रहित अरूपी हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।7।।

8- वचन-रचनधीरः पापधूलीसमीरः कनकनिकषगौरः क्रूरकर्मारिसौरः ।

कुलस-दहन-नीरः पतितानन्तवीरः जयति जगति चन्द्रो वर्धमानो जिनेन्द्रः ।।

भावार्थ- अनुपम वचनों की रचना करने में धीर वीर हैं, पापरूप धूली को उड़ाने के लिए समीर(वायु) हैं, सन्तप्त सवर्ण के समान गौर वर्ण वाले हैं, क्रूर कर्मरूप शत्रुओं के विदारण के लिए सूर्य के समान प्रचण्ड तेज के धारक हैं, कुलस की ज्वाला को शान्त करने के लिए जल के समान हैं और अनन्त मोहरूपी वीरों के विजेता हैं, ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र चन्द्र जगत् में जयवन्त हैं ।।8।।

9- यस्त्रिसन्ध्यमनवद्यमुच्यते स्तोत्रमंत्रकम् ।

स पापतो विमुच्येत प्रोक्तं विशालकीर्त्तिना ।।

भावार्थ- जो मनुष्य विशाल कीर्त्ति के द्वारा रचित इस निर्दोष स्तोत्ररूप मंत्र का तीनों सन्ध्याओं में पाठ करता है, वह पापों के सन्ताप से विमुक्त हो जाता है ।।9।।

(इति श्री विशालकीर्त्ति विरचितं वर्धमान स्तोत्रम्)

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

4- नमस्काराष्टकम् स्तोत्रम्

1- तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ, तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।

तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय, तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशौषणाय ।।

भावार्थ- त्रिभुवन के जीवों की पीड़ा के हरने वाले हे नाथ, आपको नमस्कार है, भूतल के विमल आभूषण आपको नमस्कार है, त्रिजगत् के परमेश्वर आपको नमस्कार है, और भव-सागर के शोषक हे जिन आपको नमस्कार है ।।1।।

2- तुभ्यं नमः सकललोकहितंकराय, तुभ्यं नमः सकलकर्मविनाशकाय ।

तुभ्यं नमः सकलभूतसुतारकाय, तुभ्यं नमो जिनवरेन्द्र सुखांकिताय ।।

भावार्थ- सर्व लोक के हित करने वाले भगवन्, आपको नमस्कार है, सकल कर्मों के विनाशक आपको नमस्कार है, समस्त प्राणियों के तारक आपको नमस्कार है, और उत्तम सुखयुक्त हे जिनवरेन्द्र, आपको नमस्कार है ।।

3- तुभ्यं नमः सकलदोषविवर्जिताय, तुभ्यं नमः सकलमर्मप्रदर्शकाय ।

तुभ्यं नमः परमसेवकतारकाय, तुभ्यं नमो रतिपतेर्मदनाशकाय ।।

भावार्थ- सकल दोषों से रहित आपको नमस्कार है, सर्व तत्त्वों के मर्म (रहस्य) के प्रदर्शक आपको नमस्कार है, परम-सेवकों के तारक आपको नमस्कार है, और रतिपति (कामदेव) के मद-नाशक आपको नमस्कार है।।

4- तुभ्यं नमो अखिलकषायविवर्जिताय, तुभ्यं नमो अखिलभवोदधिशोषणाय ।

तुभ्यं नमः परमकेवलज्ञानदाय, तुभ्यं नमः परमदेव जिनेश्वराय ।।

भावार्थ- समस्त कषायों से रहित आपको नमस्कार है, समस्त भव-सागर के शोषक आपको नमस्कार है, परम केवलज्ञान के दाता आपको नमस्कार है, और परम जिनेश्वर देव को नमस्कार है ।।4।।

5- तुभ्यं नमः सकलदर्शनधारकाय, तुभ्यं नमः सकलज्ञानप्रकाशकाय ।

तुभ्यं नमः सकलवीर्यसुधारकाय, तुभ्यं नमः सकलशर्मधराधिकाय ।।

भावार्थ- सम्पूर्ण दर्शन गुण के धारक आपको नमस्कार है, सकल ज्ञान के प्रकाशक आपको नमस्कार है, अनन्त वीर्य के धारक आपको नमस्कार है, और अनन्त सुख के धारक आपको नमस्कार है ।।5।।

6- तुभ्यं नमः सकलसत्त्वहितंकराय, तुभ्यं नमो दशसुधर्म-विवर्धकाय ।

तुभ्यं नमः सकलपापविनाशकाय, तुभ्यं नमः सकलतत्त्वप्रकाशकाय ।।

भावार्थ- सर्व प्राणियों के हितकर्त्ता आपको नमस्कार है, उत्तम क्षमादि दशधर्मों के बढ़ाने वाले आपको नमस्कार है, सकल पापों के विनाशक आपको नमस्कार है, और सर्व तत्त्वों के प्रकाशक आपको नमस्कार है ।।6।।

7- तुभ्यं नमः सकलव्यर्त्तिविनाशकाय, तुभ्यं नमः सकलभूषण-भूषकाय ।

तुभ्यं नमः सकललोकविभासकाय, तुभ्यं नमः परमपूज्यनिरञ्जनाय ।।

भावार्थ- सर्व आर्त्रि के विनाशक आपको नमस्कार है, सकल आभूषणों से विभूषित या सर्व आभूषण को शोभित करने वाले आपको नमस्कार है, सकल लोक के प्रतिभासक आपको नमस्कार है, और परम पूज्य निरंजन आपको नमस्कार है ।।7।।

8- तुभ्यं नमो हतप्रमाद-जिनाग्रिमाय, तुभ्यं नमः परमदेव मुनीश्वराय ।

तुभ्यं नमः परमशान्तपदस्थिताय, तुभ्यं नमो वसुगुणाड्किंतशर्मदाय ।।

भावार्थ- हे प्रमाद के विनाशक जिनागुणी आपको नमस्कार है, हे परमदेव मुनीश्वर आपको नमस्कार है, परम शान्त पद में स्थित आपको नमस्कार है, और सम्यक्त्व आदि आठ प्रसिद्ध गुणों से विराजमान सुख के देने वाले आपको नमस्कार है ।।8।।

(संकलित)

5- गोम्मटेश्वर स्तुतिः (5)

1- तुभ्यं नमोअस्तु शिवशंकरशंकराय, तुभ्यं नमोअस्तु कृतकृत्यमहोन्नताय ।

तुभ्यं नमोअस्तु घनघातिविनाशनाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- हे सुख के करने वाले शिव-शंकर, तुम्हें नमस्कार हो, हे कृतकृत्य, महान् उन्नत (उत्कृष्ट अवगाहना के धारक) आपको नमस्कार हो, घन-घातिया कर्मों के विनाशक आपको नमस्कार हो, विभु (व्यापक) स्वरूप श्री गोम्मट जिनको नमस्कार हो ।।1।।

2- तुभ्यं नमोअस्तु नवकेवललोचनाय, तुभ्यं नमोअस्तु परदेव सुनन्दनाय ।

तुभ्यं नमोअस्तु जिनशासनशासनाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- नव केवल लब्धिरूप लोचन वाले आपको नमस्कार हो, सुनन्दा के सुनन्दन हे परमदेव आपको नमस्कार हो, जिनशासन के प्रकाशन करने वाले आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मटजिन को नमस्कार हो ।।2।।

3- तुभ्यं नमोअस्तु मदवारणवारणाय, तुभ्यं नमोअस्तु सुरराजविराजिताय ।

तुभ्यं नमः परममंगलमंगलाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- मदरूपी हाथी के निवारण करने वाले आपको नमस्कार हो, सुरराज (इन्द्र) से विराजमान आपको नमस्कार हो, मंगलों में परम मंगलस्वरूप आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मटजिन को नमस्कार हो ।।3।।

4- तुभ्यं नमोअस्तु गिरिमस्तकसंस्थिताय, तुभ्यं नमोअस्तु कुमताद्रिविभेदनाय ।

तुभ्यं नमोअस्तु शशिसूर्यसमप्रभाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- विन्धगिरि के मस्तक पर संस्थित आपको नमस्कार हो, कुमतरूप पर्वतों के भेदन करने वाले आपको नमस्कार हो, चन्द्र और सूर्य के समान प्रभा के धारक आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मटजिन को नमस्कार हो ।।4।।

5- तुभ्यं नमोअस्तु विषयाभिषखंडनाय, तुभ्यं नमोअस्तु भुवन त्रयमंडनाय ।

तुभ्यं नमोअस्तु गुणरत्नकरंडकाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- इन्द्रियों के विषयरूपी विष के खंडन करने वाले आपको नमस्कार हो, भुवनत्रय के मंडनस्वरूप आपको नमस्कार हो, गुणरूपी रत्नों के करण्डक (पिटारे) आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मटजिन को नमस्कार हो ।।5।।

6- तुभ्यं नमोअस्तु मतिवार्धिविवर्धनाय, तुभ्यं नमोअस्तु परमार्थ-समर्थनाय ।

तुभ्यं नमोअस्तु सकलामरगर्जनाय, तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- बुद्धिरूपी सागर के बढ़ाने वाले आपको नमस्कार हो, परमार्थ के समर्थन करने वाले आपको नमस्कार हो, समस्त देवों के द्वारा की जाने वाली गुण गर्जना के धारक आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मट जिन को नमस्कार हो ।।6।।

7- तुभ्यं नमोअस्तु निरुपाधि-निरंजनाय,

तुभ्यं नमोअस्तु भववारिविनाशनाय ।

तुभ्यं नमः सकल जन्तुहितंकराय,

तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- उपाधि-रहित निरंजनस्वरूप आपको नमस्कार हो, भव-जल के विनाशक आपको नमस्कार हो, सर्व जन्तुओं के हित करने वाले आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मटजिन को नमस्कार हो ।।7।।

8- तुभ्यं नमोअस्त्व खिललोक विलोचनाय,

तुभ्यं नमोअस्तु गुणदृग अनन्तसुबोधकाय ।

तुभ्यं नमोअस्तु परमार्थगुणाकराय,

तुभ्यं नमोअस्तु विभवे जिनगोम्मटाय ।।

भावार्थ- समस्त लोक के अवलोकन करने वाले आपको नमस्कार हो, अनन्त गुणों के प्रबोधक आपको नमस्कार हो, परमार्थरूप गुणों के आकर (भण्डार) आपको नमस्कार हो, विभुस्वरूप श्री गोम्मट जिनको हमारा नमस्कार हो ।।8।।

6- श्री पंचपरमेष्ठिस्तोत्रम्

1- श्रीमत्रिलोकीतिलकायमानो मानोन्नतो भव्यसरोजभानुः ।

देवेन्द्र-नागेन्द्र-नरेन्द्रवृन्दैर्वन्धो जिनेन्द्रो विबुधां विधत्ताम् ।।

भावार्थ- जो श्रीमान् हैं, अर्थात् अनन्तचतुष्टय स्वरूप अन्तरंग लक्ष्मी के और बहिरंग समवशरण लक्ष्मी से युक्त हैं, तीनों लोकों के तिलक के समान हैं, सन्मान से उन्नत (सर्वोच्च) हैं, भव्य रूप कमलों को विकसित करने के लिए सूर्य के समान हैं, देवेन्द्र, नागेन्द्र और नरेन्द्र-समूह से वन्दनीय हैं, ऐसे श्री अरिहन्त जिनेन्द्र मुझे विशेष बुद्धिशाली करें ।।1।।

2- अनादि-संसार-निबद्धकर्म- प्रबन्ध दूरीकृत-निर्मलात्मा ।

सिद्धो विशुद्धो भुवनप्रसिद्धो वृद्धिं सुखस्यानिशमातनोतु ।।

भावार्थ- अनादिकाल से बंधे हुए कर्म-समूह को दूर कर देने से जिनका आत्मा निर्मल है, जिन्होंने अपने अभीष्ट अर्थ को सिद्ध कर लिया है, जो विशुद्ध हैं, भुवन में प्रसिद्ध वे सिद्ध भगवान् निरन्तर सुख की वृद्धि करें ।।2।।

3- आचारसर्वस्वमुपाचरिष्णुराचारको भव्यवरेण्यवर्गान् ।

अर्थस्य सूर्यो गिरिराजधैर्यो धियं विधत्तां विहितप्रवृत्तौ ।।

भावार्थ- जो ज्ञानाचार, दर्शनाचार,चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन पांच प्रकार के आचार रूप सर्वस्व (धन) को स्वयं आचरण करते हैं और अन्य भव्य-शिरोमणि-समूह को आचरण कराते हैं, जो तत्त्वो का अर्थ प्रकाशित करने के लिए सूर्य के समान हैं और गिरिराज (सुमेरु) के समान धैर्यशाली हैं, ऐसे आचार्य परमेष्ठी कर्त्तव्य की प्रवृत्ति में बुद्धि को देवें ।।3।।

4- आक्षेप-नीति-प्रवणप्रमाणैरेकान्तवादस्य रहो निरस्य ।

अर्थोपदिष्टा विमला अअ गमानामध्यापको बुद्धिमलंकरोतु ।।

भावार्थ- जो आक्षेप-नीति में प्रवीण प्रबल प्रमाणों के द्वारा एकान्तवाद के रहस्य का निराकरण करके निर्मल आगमों के अर्थ के उपदेष्टा हैं, ऐसे अध्यापक (उपाध्याय) परमेष्ठी मेरी बुद्धि को अलंकृत करें ।।4।।

5- सर्वेषु भावेषु समानचित्त-वृत्तिं विधाय प्रविहाय रागम् ।

मोक्षं विमुक्षुः स्वहितैकतानस्तनोतु शान्तिं वरसर्वसाधुः ।।

भावार्थ- जो इष्ट-अनिष्ट सभी प्रकार के पदार्थों में समान चित्तवृत्ति को रखकर, विषयों में अनुराग को छोड़कर मोक्ष के अभिलाषी हैं और अपने एकमात्र हित में संलग्न हैं ऐसे श्रेष्ठ सर्व साधु परमेष्ठी मुझे सर्व जगत् को शान्ति देवें ।।5।।

इति श्री पंचपरमेष्ठिस्तोत्रं समाप्तम्

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

7- पञ्चपरमेष्ठिस्तोत्रम् (पञ्चनमस्कारस्तवनम्)

1- विश्लिष्यन् घनकर्मराशिमशनिः संसारभूमीभृतः,

स्वनिर्वाणपुरप्रवेशगमने निःप्रत्यवायः सताम् ।

मोहान्धे वटसंकटे निपतितान् हस्तावलम्बो अर्हतां,

पायान्नः स चराचरस्य जगतः सञ्जीवनं मन्त्रराट् ।।

भावार्थ- जो मंत्रराज सघन कर्म-राशि को विलग करने वाला है, संसार रूप पर्वतों को भेदन करने के लिए वज्र के समान है, जो सत्पुरुषों के स्वर्ग और मोक्षरूप पुर के भीतर प्रवेश कराने में निर्विघ्न सहायक है, मोहान्धरूप विकट कूप-संकट में पड़े हुए प्राणियों को हस्तावलम्बन देने वाला है, चर और अचर जगत् का संजीवन है, ऐसा यह अर्हन्तों (परमेष्ठि पद को प्राप्त जनों) नमस्कारात्म मंत्रराज हम लोगों की रक्षा करे ।।1।।

2- एकत्र पञ्चपदमन्त्रपदाक्षराणि, विश्वत्रयं पुनरनन्तगुणं पवित्रम् ।

यो धारयेत्किल तुलानुगतं तथापि वन्दे महागुरुतरं परमेष्ठिमन्त्रम् ।।

भावार्थ- एक ओर पंचपरमेष्ठि पदों के वाचक मंत्र-पदों के अक्षर हैं, दूसरी ओर अनन्त गुणित यह तीनों लोक हैं, इन दोनों को यदि कोई पुरुष तुला (तराजू) के दोनों पलड़ों पर

धारण करे (तौले) तो पञ्चपरमेष्ठिमंत्र ही महागुरुतर निकलेगा। ऐसे महान गुरु (भारी) पवित्र पञ्चपरमेष्ठिमंत्र को मैं नमस्कार करता हूं ।।2।।

3- ये केचन सुकुमुदाकर काननान्ता दुत्सर्पिणिप्रभृतयः प्रयदुर्विवर्त्ता ।

तेष्वप्ययं परतरं प्रथितं पुरापि लब्ध्वेदमेव हि गताः शिवमत्र लोकाः ।।

भावार्थ- उत्तम श्वेत कमलों के आस्पदस्वरूप कानन (वन) से आदिक विवर्त जिनने कुछ भी पूर्व में प्रकट हुए हैं, उन सब में यह मंत्रराज ही परम प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है और इसे प्राप्त करके असंख्य लोग इस संसार से शिव (मोक्ष) को गये हैं ।।3।।

4- उत्तिष्ठन्तिपतन्स्खलन्नपि धरापीठे लुठन् वा स्मरे-

ज्जाग्रद्धा प्रहसन् स्वपन्नपि वने विभ्येच्च खेदन्नपि ।

गच्छन् ब्रह्मणि वेश्मनि प्रतिपदं कर्म प्रकुर्वन्नमुं,

यः पञ्चप्रभुमन्त्रमेकमनिशं किं तस्य नौ वाञ्छितम् ।।

भावार्थ- उठते हुए, गिरते हुए, स्खलित होते (डगमगाते) हुए, धरातल पर लोटते-लुढ़कते हुए, जागते हुए, हंसते हुए, सोते हुए भी, डरते हुए, खेद-खिन्न होते हुए भी, ब्रह्म (मन्दिर में), घर में जाते हुए, तथा प्रत्येक पद (कदम) पर कर्म करता हुआ भी जो मनुष्य इस एक पंच प्रभु (परमेष्ठी) के मंत्र को निरन्तर स्मरण करता है, उसके ऐसा कौन सा मनोवांछित कार्य है जो न प्राप्त होवे ? अर्थात सभी प्राप्त होंगे ।।4।।

5- संग्राम-सागर-करीन्द्र-भुजंग-सिंहा दुर्व्याधि-वह्नि-रिपु-बन्धन-सम्भवानि ।

चौर-ग्रह-भ्रम-निशाचर-शाकिनीनां नश्यन्ति पञ्चपरमेष्ठिपदैर्भयानि ।।

भावार्थ- संग्राम, सागर, गजराज, सर्प, सिंह, दुर्व्याधि, अग्नि और शत्रु-बन्धन से उत्पन्न होने वाले, तथा चोर, ग्रह, भ्रम (उन्माद) निशाचर (राक्षस) और शाकिनी-डाकिनी जनों के सभी भय पंच परमेष्ठी-पदों के द्वारा नष्ट हो जाते हैं ।।5।।

6- यो लक्षं जिनबद्ध-लक्ष्यहृदयं सुव्यक्तकर्णक्रमः,

श्रद्धावान् विजितेन्द्रियो भवहरं मन्त्रं जपेच्छावकः ।

पुष्पैः श्वेतसुगन्धिभिः सुविधिना लक्षप्रमाणैरमुं,

यः सम्पूज्यते स विश्वमहितस्तीर्थाधिनाथो भवेत् ।।

भावार्थ- जो श्रद्धावान् इन्द्रिय-विजेता श्रावक जिनेन्द्रदेव के स्मरण का लक्ष्य अपने हृदय में बांधकर, सुव्यक्त वर्णों का उच्चारण करता हुआ इस भव-भय-हारक मंत्र का एक लाख प्रमाण जाप करता है और उत्तम विधि से श्वेत सुगन्धित पुष्पों के द्वारा एक लाख प्रमाण इसे पूजता है, वह विश्व-पूजित तीर्थाधिनाथ (तीर्थंकर) होता है ।।6।।

7- इन्दु-र्दिवार्करतया रविरिन्दुरूपं पातालमम्बरमिला सुरलोकमेव ।

किं जल्पतेन बहुना भुवनत्रये अपि यन्नाम तन्न विषयं च समं च तस्मात् ।।

भावार्थ- इस मंत्रराज के प्रभाव से चन्द्रमा सूर्यरूप से, सूर्य चन्द्र रूप से, पाताल आकाश रूप से और पृथ्वी स्वर्ग रूप से परिणत हो जाती है। अधिक कहने से क्या, इस भुवनत्रय में ऐसी कौन सी विषय वस्तु है जो इसके प्रभाव से समरूप न हो जावे ? अर्थात् सभी विषमरूप वस्तुएं सम या अनुकूल रूप से परिणत हो जाती है ।।7।।

8- जग्मुर्जिनास्तदपवर्गपदं यदैव, विश्वं वराकमिदमत्र कथं विना अस्मात् ।

तं सर्वलोकभेवनोद्धरणाय धीरैर्मन्त्रात्म यं जिनवरैर्निहितं तदत्र ।।

भावार्थ- जब जिनदेव अपवर्ग (मोक्ष) पद को प्राप्त हुए, तब यह सारा विश्व इस मंत्रराज के विना बराक (दीन) कैसे हो जाय, इस विचार से धीर वीर जिनवरों ने सर्व लोकरूप भवन के उद्धार करने के लिए यहां पर यह मंत्रात्मक पंचनमस्कार रचा ।।8।।

9- हिंसावाननृतगीप्रियः परधनाकांक्षी परस्त्रीरतः,

किञ्चान्येष्वपि लोकगर्हितमतिः पापेषु गाढोद्यतः ।

मन्त्रेशं यदि सं स्मरेच्च सततं प्राणान् त्यजेत्सर्वदा,

दुःकर्माहितदुर्गतिक्षणचयः स्वर्गीभवेन्मानवः ।।

भावार्थ- कोई व्यक्ति हिंसावान् (जीव-घातक) हो, असत्य बोलना ही जिसे प्रिय हो, पराये धन का अभिलाषी हो, परस्त्रियों में रत हो, अन्य भी पापों में प्रगाढ़रूप से उद्यत हो और लोक-निन्दित बुद्धि वाला हो, वह दुष्कर्मों के उपार्जन से दुर्गति का संचय करने वाला मानव भी यदि इस मंत्रराज को सदा सम्यक् प्रकार भावों से स्मरण करता हुआ प्राणों को छोड़े, तो स्वर्ग-सम्पदा का स्वामी होता है ।।9।।

10- अयं धर्मः श्रेयानयमपि च देवो जिनपूतिः,

व्रॅतं चैतच्छीश्रीमन् नयतिचयः सर्वफलदम् ।

किमन्यैर्वाग्जालैर्बहुभिरुत संसारजलधौ,

नमस्कारात्तत्किं यदिह शुभरूपं न भवति ।।

भावार्थ- यह जिन-प्रणीत धर्म ही श्रेयकर है, ये जिनराज ही सर्वश्रेष्ठ देव हैं, यह जिन व्रत ही कल्याणकारी हैं, ऐसा दृढ़ श्रद्धान करके जो पुरुष पुरुष इस सर्वफल-दायी मंत्रराज को सदा जपता है, वह श्रीमान् (अन्तरंग-बहिरंग लक्ष्मी का स्वामी) होता है। अन्य बहुत वचन-जालों से क्या, इस संसार-सागर में ऐसी कौन सी वस्तु है जो इस पंचनमस्कार मंत्र से शुभरूप न हो जाये ? अर्थात् मंत्रराज के प्रभाव से सभी कुछ शुभरूप से परिणत हो जाता है ।।10।।

11- सुखे दुःखे भयस्थाने संग्रामे शत्रुसंकटे ।

श्रीपञ्चगुरुमन्त्रस्य पाठः कार्यः पदे पदे ।।

भावार्थ- सुख में, दुःख में, भय के स्थान में, संग्राम में, और शत्रु का संकट उपस्थित होने पर श्री पंचपरमेष्ठिवाचक इस मंत्र का पद-पद पर पाठ करते रहना चाहिए ।।11।।

इति श्री उमास्वामि विरचित पञ्चपरमेष्ठिस्तोत्रम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

8- अद्याष्टकस्तोत्रम्

1- अद्याखिलं कर्म जितं मयाअद्य मोक्षो अनुभूतो अननुभूतपूर्वः ।

तीर्णो भवार्णोनिधिरद्य घोरो जिनेन्द्र-पादाम्बुज-दर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मैंने सर्व कर्मों को जीत लिया है, पूर्वकाल में जिसका कभी अनुभव नहीं किया, उस मोक्ष का आज मैं अनुभव कर रहा हूं, और आज मैंने इस घोर संसार-सागर को पार कर लिया है ।।1।।

2- अद्‌य श्रियो मां वृणुते अद्‌य लोके मान्यो अस्मि मान्येरपि सर्वतो अहम्‌ ।

उपार्जितं पुण्यमगण्यमद्‌य जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मुझे सभी लक्ष्मियां वरण कर रही हैं, और मैं मान्य पुरुषों के द्‌वारा सर्व प्रकार से सम्मान को प्राप्त हो रहा हूं। आज मैंने अगण्य पुण्य उपार्जित किया है ।।2।।

3- अद्‌य त्रिशुद्‌धद्‌या वरपात्रदानं पूजाश्च शीलान्युपवासभेदाः ।

कृताश्च तेषां फलमद्‌य पूर्णं जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मैंने जो आज तक मन वचन काय की शुद्‌धि के द्‌वारा उत्तम पात्रों को दान दिया है, जिन-पूजन किया है, निर्मल शील व्रतों को पाला है और अनेक प्रकार के उपवासों को किया है, उन सब का पूर्ण फल आज मैंने पा लिया है ।।3।।

4- अद्‌य द्‌विधा अकारि तपो मयोग्रं धर्मः क्षमादिः परमाश्रितो अद्‌य ।

क्षेयान्सि भूयांस्यपि मे करे अद्‌य जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मैंने अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रकार का उग्र तप किया, आज क्षमा-मार्दव आदि दश परम धर्मों का आश्रय लिया और सभी भर-पूर कल्याण मेरे हस्तगत हुए हैं ।।4।।

5- अद्‌या अअ पदो नाशमिताः समस्ता, मनोरथा मे निखिलाश्च पूर्णाः ।

अश्रेयसां सन्ततिरद्‌य नष्टा जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के दर्शन से मेरी समस्त आपदाएं नाश को प्राप्त हो गई हैं, मेरे सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण हो गये हैं, और आज सभी दुर्भाग्यों की परम्परा नष्ट हो गई है ।।5।।

6- अद्‌येक्षितं सद्‌म रसायनानां चिन्तामणेर्धाम च कामधेनुः ।

कल्पद्रुमार्थः फलितो ममाद्‌य जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मैंने रसायनों के सदन को देख लिया है, चिन्तामणिरत्न के धाम को पा लिया है, कामधेनु हस्तगत हो गई है और आज मेरे कल्पवृक्ष रूप अर्थ फलित हो गया है ।।6।।

7- अद्योत्तमांगं मम सार्थमासीन्मुखं सुवाचा मुखरायते अद्य ।

साफल्यमक्ष्णोर्ध्रुवमद्य जातं जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मेरा यह उत्तभांग (मस्तक) सार्थक हो गया है, मेरा मुख सुन्दर वाणी से मुखर हो रहा है, और निश्चय से आज मेरे दोनों नेत्रों का पाना सफल हो गया है ।।7।।

8- अद्या हमासं सुतरां कृतार्थः पुण्यात्मनामद्य पुरोगमो अस्मि ।

जन्माद्य जातं सफलं मदीयं जिनेन्द्र-पादाम्बुजदर्शनेन ।।

भावार्थ- आज श्री जिनेन्द्र देव के चरण-कमलों के दर्शन से मैं अत्त्यन्त कृतार्थ हो गया हूं, आज मैं पुण्यात्माओं का पुरोगामी हो रहा हूं और आज मेरा जन्म सफल हो गया है ।।8।।

9- अद्याष्टकं ये प्रपठन्ति नित्यमनन्तकीर्च्याख्यवरैर्मुनीन्द्रैः ।

विधीयते (ते) तदिदं प्रकीर्तेः द्मांभवान्ते परमां लभन्ते ।।

भावार्थ- जो पुरुष अनन्त कीर्ति वाले मुनीन्द्र से रचित इस अद्याष्टक को नित्य भक्ति-पूर्वक पढ़ते हैं, वे परम कीर्ति को पाकर भव के अन्त में उत्कृष्ट मोक्ष-लक्ष्मी को प्राप्त करते हैं ।।9।।

इति अनन्तकीर्ति विरचित इत्यधाष्टकं समाप्तम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

9- अथ जिनेन्द्र-वन्दना

1- श्रीनाभिराजतनुजः सदयो विहारो देवो अ जितो जयतु कौस दयाविहारः ।

श्रीसंभवो हतभवो अ दित सारसारः श्रीशो अभिनन्दनजिनोदितसारसारः ।।

भावार्थ- श्री नाभिराज के सुपुत्र श्री ऋषभ देव परम दयालु हैं और उनका विहार संसार में सुख-शान्ति-वर्धक रहा है, श्री अजित देव भूमण्डल पर जयवन्त रहें जिनका विहार दयामय रहा है। भव के नाशक श्री संभव देव ने संसार को परम सारभूत वीतराग विज्ञान दिया है और श्री अभिनन्दन जिनेश्वर ने सारों का सार परम धर्मामृत दिया है ।।1।।

2- दृष्टान्तको अपि सुमितः कृतगोविचारः पद्मप्रभो अस्तु च मुदे कृतगोविचारः ।

श्रीमान् सुपार्श्व जिहरो मुदिता असुराजिश्चन्द्रप्रभो गतमदा मुदिता सुराजि ।।

भावार्थ- यमराज का हनन करने वाले श्री सुमति देव ने जगत्कल्याणकारिणी वाणी का विस्तार किया है, श्री पद्मप्रभदेव मेरे और अन्य जीवों के आनन्द के लिए वाणी के प्रचारक हों। श्रीमान् सुपार्श्व जिनेश्वर पाप के हर्ता और देवों की पंक्ति को प्रमुदित करने वाले हैं, श्री चन्द्रप्रभस्वामी मद-रहित देव-समूह के हर्ष-वर्धक हैं ।।2।।

3- सज्ज्ञानभास्कर नुतामर पुष्पदन्त श्रीशीतलेश घृतचामर पुष्पदन्त ।

श्रेयान् जयेश वरवृत्त महीकृतान्तः श्री वासुपूज्य जयवृत्त महीकृतान्तः ।।

भावार्थ- हे पुष्पदन्त, आप सज्ज्ञान के भास्कर (सूर्य) हैं, और देवों से नमस्कृत तथा कुन्द पुष्प के समान उज्जवल दन्त-पंक्ति के धारक हैं, हे श्री शीतल स्वामिन्, देवगण आपके ऊपर चँवर ढोरते हैं और आप भी पुष्पों के समान दन्त-पंक्ति वाले हैं। हे श्रेयनाथ जिनेश, आप उत्तम चरित्र के धारक हैं और पृथ्वी-परिभ्रमण का अन्त करने वाले हैं। श्री वासुपूज्य जिन जयशील चरित्र वाले हैं और संसार के अन्तकर्ता हैं ।।3।।

4- देवाधिदेव विमलो परतीर्थतीर्थ स्वामिन्ननन्त विधुतापरतीर्थतीर्थ ।

श्रीमान् जगत्प्रकटितामलधर्मधर्म शान्ते जयेश धृतसामलधर्मधर्म ।।

भावार्थ- हे देवाधिदेव विमल जिनेशवर, आप पर-तीर्थियों (अन्य मतावलम्बियों) के लिए तीर्थ स्वरूप हैं, हे अनन्त स्वामिन्, आप परतीर्थियों के लिए तीर्थ (शासन) के निराकरण-

कर्त्ता हैं। श्रीमान् धर्मनाथ भगवान् जगत् में निर्मल धर्म को प्रकट करने वाले और परम निर्मल धर्म के धारक श्री शान्ति जिनेश जयवन्त रहें ।।4।।

5- कुन्थो जयेश धृतभूसुख गाजवाज नाथार धूतनिधि भूसुखगाजवाज ।

मल्ले कुमार मुनिशूर विरामराम श्री सुव्रतेश नुतमार विरामराम ।।

भावार्थ- श्री कुन्थ जिनेश भूमंडल पर सुख के विस्तारक हैं, श्री अरजिनेश नवनिधि और चौदह रत्नों के धारक एवं पृथ्वी पर सुख के विस्तारक हैं। श्री मल्लिकुमार मुनिजनों में शूरवीर एवं आत्मा में विश्राम करने वाले हैं। श्री सुव्रेश कामदेव के द्वारा नमस्कृत एवं आत्म-स्वरूप में रमण करने वाले हैं ।।5।।

6- स्वामिन्नमीश जय भाजित मारमार नेमे यतीन्द्र विधुताजित मारमार ।

श्री पार्श्वनन्द जगतीभग वर्धमान सिद्धार्थनन्दन सनाभग वर्धमान ।।

भावार्थ- हे नमीश स्वामिन्, आप काम को विध्वंस कर जय को प्राप्त हैं, नेमि यतीश्वर, आप अजेय काम महान् विजेता हैं। श्री पार्श्वजिनेन्द्र इस जगत् में आनन्द के बढ़ाने वाले हैं, और सिद्धार्थनन्द्न श्री वर्धमान जिनेश्वर सदा सुख के विस्तारक हैं ।।6।।

7- ज्ञानोग्रहेति कृतसम्भव पाशनाशाः वैदग्धदग्ध रतलो भवपाशनाशाः ।

मर्त्यामरेन्द्र-पटली-जिनचन्द्रपूज्याः कुर्वन्तु मंगलमिमे जिनचन्द्र पूज्याः ।।

भावार्थ- ज्ञानरूपी उग्र वाण के द्वारा भव-पाश का नाश करने वाले, बुद्धि-चातुर्य से अतल (अगाध) भव-पाश के नाशक, मनुष्यों और देवेन्द्रों के पटल (समूह) से जो जिनचन्द्र पूज्य हैं ऐसे ये श्री जिनचन्द्र चरण हम सबका मंगल करें ।।7।।

8- उद्भूतमोहरससंगततारकारा दृक्शक्त्यनन्तभगतागततारकाराः ।

सौलब्धिभंग-विदलज्जिनचन्द्रपादाः कुर्वन्तु मंगलमिमे जिनचन्द्र पादाः ।।

भावार्थ- उदय को प्राप्त मोहनीय कर्म रस-संगति को दूर करने वाले अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तशक्ति और अनन्तसुख के भोगने वाले, सुलब्धियों के भंग विदलित करने वाले अर्थात् उत्कृष्ट नव केवललब्धियों के स्वामी ये जिनेन्द्रपाद सबका मंगल करें ।।8।।

9- यद्-ध्यानतो मनसि नारतिहास दम्भा निर्मूलता खिलवधूरतिहासदम्भाः ।

प्रह्वीभवन्मनुजराज्जिनचन्द्रदेवाः कुर्वन्तु मंगलमिमे जिनचन्द्रदेवाः ।।

भावार्थ- जिनके ध्यान करने से मन में अरति, हास्य और दम्भ नहीं रहता है, जिन्होंने समस्त जाति की स्त्रियों के रति, हास और दम्भ को निर्मूलित कर दिया है, मनुष्यों के इन्द्र चक्रवर्ती जिनके आगे नम्रीभूत हो रहे हैं, ऐसे ये जिनचन्द्रदेव सबका मंगल करें ।।9।।

10- विख्यातकं विदितबन्धुरसावतारं संसारवासविरलं हृतकाण्डभूतम् ।

वन्दे नवं वदनकञ्जधृताकसाधुं भिन्नं जिनं भिदजिरो भवहारभावम् ।।

भावार्थ- जो भुवन-विख्यात हैं, बन्धु-रस (बान्धव-स्नेह) जिनका जगत को विदित है, संसार-वास को विरल करने वाले, शल्यों के अपहरणकर्त्ता, नवीन सुन्दर मुख-कमल के धारक और भवापहारक भावों के धारण करने वाले ऐसे जिनदेव की मैं वन्दना करता हूं ।।

इतिश्री जिनचन्द्र देव विरचितं महरयमक स्तोत्रं समाप्तम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

10- अथ स्वस्ति मंगल विधानम्

1- स्वस्त्यैव नः स्याद् वृषभो जिनेन्द्रः स्वस्तिप्रदो नस्त्वजितो जिनेन्द्रः ।

श्री सम्भवो नौ अस्तु सदैव स्वस्ति स्वस्त्यैव भूयादभिनन्दनो जिनः ।।

भावार्थ- श्री वृषभजिनेन्द्र हमारा कल्याण करें, श्री अजित जिनेन्द्र हमारे लिए कल्याण के दाता होवें, श्री सम्भव जिनेन्द्र हमारे लिए सदा मंगलकारी होवें, और श्री अभिनन्दन जिनेन्द्र हमारे लिए मंगलकारक होवें ।।1।।

2- स्वस्ति प्रवृद्धः सुमतिस्तु नोअस्तु पद्मप्रभो नः प्रतनोतु स्वस्ति ।

सुपाार्श्वनामापि जिनो अस्तु स्वस्ति चन्द्रप्रभो नो दिशताच्च स्वस्ति ।।

भावार्थ- श्री सुमतिदेव हमारे कल्याण के प्रवर्धक होवें, श्री पद्मप्रभ जिनेश्वर हमारे कल्याण का विस्तार करें, श्री सुपार्श्वनाथ जिन भी हमारा कल्याण करें और श्रीचन्द्रप्रभ स्वामी हमें कल्याण देवें ।।2।।

3- श्री पुष्पदन्तो नुदनुक्त स्वस्ति सुस्वस्तिदायी मम शीतलो अस्तु ।

श्रेयान् स स्वस्त्यैव ममैव भूयाच्छी वासुपूज्यो अपि जिनो अस्तु स्वस्ति ।।

भावार्थ- श्री पुष्पदन्तदेव हमारा कल्याण करें, श्री शीतलनाथ मेरे लिए कल्याण देने वाले होवें, श्री श्रेयान्श जिनेन्द्र मेरे लिए कल्याणकारी होवें, और श्री वासुपूज्य जिन भी मेरे लिए कल्याण-कर्त्ता होवें ।।3।।

4- स्वस्तिप्रदो नो विमलो जिनो अस्तु स्वस्त्यै त्वनन्तो अपि ममास्तु नित्यम् ।

धर्मोअपि मां स्वस्तिकरः सदा अस्तु श्री शान्तिनाथो अस्तु ममैव स्वस्ति ।।

भावार्थ- श्री विमल जिनेश्वर हमारे लिए स्वस्ति प्रदाता होवें, श्री अनन्तनाथ भी मेरे नित्य कल्याण के लिए होवें, श्री धर्मनाथ भी मेरे लिए सदा स्वस्ति कारक रहें और श्री शान्तिनाथ मेरे लिए स्वस्तिरूप होवें ।।4।।

5- श्री कुन्थु भूयान्मम स्वस्तिकारी जिनो अस्तवरः स्वस्तिकरश्च नो अस्तु ।

स्वस्त्यैव मल्लिस्तु जिनो अस्तु नित्यं स्वस्तिप्रदो नो मुनिसुव्रतो अस्तु ।।

भावार्थ- श्री कुन्थु जिनेश्वर मेरे स्वस्तिकारी हों, श्री अरनाथ मेरे स्वस्ति कर्त्ता होवें, श्री मल्लिजिन नित्य ही स्वस्ति के लिए होवें और मुनिसुव्रत जिन हमारे नित्य स्वस्तिदाता होवें ।।5।।

6- नमिर्जिनः स्वस्ति ममास्तु कर्त्ता स्वस्त्यैव नेमिर्जिन मे अस्तु नित्यम् ।

श्री पार्श्वनाथो मयि स्वस्तिदो अस्तु श्री स्वस्तिदो वीरजिनः सदा अस्तु ।।

भावार्थ- श्री नमिजिन मेरे स्वस्ति-कर्त्ता रहें, श्री नेमिजिन मेरे नित्य ही स्वस्ति करें, श्री पार्श्वनाथ मुझ पर स्वस्ति करें और श्री वीर जिन सदा ही मेरे लिए भी (लक्ष्मी) और स्वस्ति के देने वाले होवें ।।6।।

इति श्री नरेन्द्र सेन सूरी विरचित स्वस्ति मंङ्गल विधानम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

11- सुप्रभातस्तोत्रम्

1- श्रीनाभिनन्दनजिनाजित संभवेश, देवा अभिनन्दनमुने सुमते जिनेन्द्र ।

पद्मप्रभ प्रणुतदेव सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभा अस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे श्री नाभिनन्दन ऋषभदेव, हे अजितजिन, हे संभवेश, हे अभिनन्दन मुने, हे सुमतिजिनेन्द्र, हे पद्म समान प्रभा वाले पद्मप्रभ, हे देव-नमस्कृत सुपार्श्वनाथ, हे चन्द्र-समान प्रभा वाले चन्द्रप्रभ, तुम्हारे प्रसाद से मेरे निरन्तर सुप्रभात रहे ।।1।।

2- श्री पुष्पदन्त परमेश्वर शीतलार्यः श्रेयाञ्जिनो विगतमान सुवासुपूज्य ।

निर्दोषवाग्विमल विश्वजनीनवृत्तिः श्रीमाननन्त भवतान्मम सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे श्रीपुष्पदन्त परमेश्वर, हे शीतलार्य, हे श्रेयान्सजिन, हे मान-रहित वासुपूज्य जिन, हे निर्दोष निर्मल वचन वाले विमलनाथ, हे विश्व कल्याणकारी वृत्ति वाले श्रीमान् अनन्तजिन, तुम्हारे प्रसाद से मेरे निरन्तर सुप्रभात रहे ।।2।।

3- श्री धर्मनाथ गणभृन्नतशान्तिनाथ, कुन्थो महेश परमार विभारमल्ली ।

सत्यव्रतेश मुनिसुव्रत सन्नमी नेमिः पवित्र सततं मम सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे धर्मनाथ, हे गण-पोषक शान्तिनाथ, हे कुन्थु महेश, हे परम अरनाथ, हे कर्मभार-रहित मल्लिनाथ, हे सत्य व्रतेश मुनिसुव्रत, हे सन्नमीश, हे पवित्र नेमिनाथ, तुम्हारे प्रसाद से मेरे निरन्तर सुप्रभात रहे ।।3।।

4- श्री पार्श्वनाथ परमार्थ विदांवरेण्य श्री वर्धमान हतमान विमानबोध ।

युष्मत्पदद्वयमिदं स्मरतो ममास्तु कैवल्यवस्तु विशद मम सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- परमार्थ-वेत्ताओं में वरेण्य (श्रेष्ठ) हे श्री पार्श्वनाथ, हे मान-मर्दक, अमान (असीम) बोध वाले श्रीवर्धमान, तुम्हारे इन दोनों चरण-कमलों को स्मरण करते हुए मेरे सदा सुप्रभात रहे और निर्मल कैवल्य पद प्राप्त हो ।।4।।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)---

12 -सुप्रभाताष्टकम्

1- चन्द्रार्कशक्रहरविष्णु-चतुर्मुखाद्यस्तीक्ष्णैः स्ववाणनिकरैर्विनिहत्य लोके ।

व्याजृम्भिते अहमिति नास्ति परो अत्र कश्चित्तं मनाथं जितवतस्तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जिस कामदेव ने अपने तीक्ष्ण वाणों के समूह से चन्द्र, सूर्य, शुक्र (इन्द्र) हर (महादेव) विष्णु आदि देवों को परास्त कर लोक में मैं ही सर्व-जगज्जेता हूं, मेरे से श्रेष्ठ कोई नहीं है, ऐसी घोषणा करके दर्पोनमत्त हुए उसे जीता, ऐसे मन्मथ-विजयी हे भगवान् तेरे प्रसाद से मेरे सुप्रभात रहे ।1।

2-गन्धर्वकिन्नरमहोरगदैत्यनाथ-विद्याधरामरनरेन्द्रसमर्चितांह्रेः ।

संगीयते प्रथिततुम्बरनारदैश्च कीर्त्तिः सदैव भुवने मम सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- गन्धर्व, किन्नर, महोरग, दैत्यनाथ (असुरेन्द्र) विद्याधर, अमरेन्द्र और नरेन्द्रों से जिनके चरण-कमल चर्चित (पूजित) हैं, और जिनकी निर्मल कीर्ति इस त्रिभुवन में प्रसिद्ध तुम्बर और नारदों के द्वारा सदैव गाई जाती है, वे त्रिजगत्पूज्य जिनेन्द्र मेरे सदा सुप्रभात करें ।।2।।

3- अज्ञानमोहतिमिरौध विनाशकस्य, संज्ञानचारुकिरणावलिभूषितस्य ।

भव्याम्बुजानि नियतं प्रतिबोधकस्यश्र श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- अज्ञान और मोहरूप घोर तिमिर (अन्धकार) समूह के विनाशक सद्-ज्ञानरूप चारु किरणावली से भूषित, जगत् के भव्यजीवरूप कमलों के नियम से प्रबोधक श्री मज्जिनेन्द्रदेव तुम्हारे प्रसाद से मेरे सुप्रभात हो ।।3।।

4- तृष्णा-क्षुधा-जनन-विस्मय-राग-मोह-चिन्ता-विषाद-मद-खेद-जरारुजोघः ।

परस्वेद-मृत्यु-रति-रोष-भयानि निद्रा देहे न सन्ति हि यतस्तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- तृष्णा (प्यास) क्षुधा, जनन (जन्म) विस्मय, राग, मोह, चिन्ता, विषाद, मद, खेद, जरा (बुढ़ापा), रोग-समूह, प्रस्वेद (पसीना), मृत्यु, रति, रोष, भय और निद्रा ये अठारह दोष जिनके शरीर में नहीं हैं, ऐसे श्री हे वीतरग जिनेन्द्र, तुम्हारे प्रसाद से मेरे सुप्रभात हो ।।4।।

5- श्वेतातपत्र-हरिविष्टर-चामरौघाः भामण्डलेन सह दुदुभिदिव्यभाषा ।

शोकाग्रदेवकरमुक्तसुपुष्पवृष्टिदेवेन्द्रपूजितवतस्तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- श्वेत आतपत्र (छत्र) हरिविष्टर (सिंहासन) चामर-समूह, भामण्डल, दुन्दुभि-नाद, दिव्यध्वनि, अशोकवृक्ष और देवों के हस्तों से छोड़ी सुपुष्पवृष्टि इन आठ प्रातिहार्यों के द्वारा देवेन्द्रों से पूजित जिनेन्द्र देव, तेरे प्रसाद से सुप्रभात हो ।।5।।

6- भूतं भविष्यदपि सम्प्रति वर्तमानं ध्रौव्यं व्ययं प्रभवमुत्तममप्यशेषम् ।

त्रैलोक्यवस्तुविषयं सचिरोषमित्थं जानासि नाथ युगपत्तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे नाथ, तुम भूत, भविष्यत् वर्तमान कालवर्ती, त्रैलोक्य-वस्तु-विषयक समस्त उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य-युक्त सर्व पदार्थ सभी को युगपत् प्रत्यक्ष जानते हो, तुम्हारे प्रसाद से मेरे सुप्रभात हो ।।6।।

7- स्वर्गापवर्गसुखमुत्तममव्ययं यत् तद्देहिनां सुभजतां विदधाति नाथ ।

हिंसा अनृतान्यवनितापररिक्षसेवा सत्याममेन हि यतस्तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे स्वामिन्, जो पुरुष हिंसा, झूठ, पर-वनिता, पर-धन और परिग्रह का परित्याग कर आपकी सुभक्ति से सेवा करते हैं, उन देह-धारियों को आप स्वर्ग और अपवर्ग के सुख देकर उत्तम अव्यय पद को देते हो, अतः तुम्हारे प्रसाद से मेरे सुप्रभात हो ।।7।।

8- संसार-घोरतर-वारिधियानपात्र, दुष्टाष्टकर्मनिकरेन्धनदीप्तव ह्ने ।

अज्ञानमूलमनसां विमलैकचक्षुः श्रीनेमिचन्द्रयतिनायक सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- इस अति भयानक संसार-सागर से पार उतारने के लिए हे उत्तम यानपात्र (जहाज), दुष्ट अष्टकर्म-समूह रूप ईधन को भस्म करने के लिए प्रदीप्त वह्नि के समान, और अज्ञान-मूलक मन वाले प्राणियों के लिए अद्वितीय निर्मल नेत्र स्वरूप हे यति-नायक नेमिचन्द्र, तुम्हारे प्रसाद से मेरे सुप्रभात हो ।।8।।

इति श्री नेमिचन्द्र यति विरचितं सुप्रभाताष्टकं समाप्तम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

13- सुप्रभाताष्टक स्तोत्रम्

1- त्रैलोक्याभिवन्द्यं श्रिया भूषितांग, शुभं मंगलं देहिनां सर्वकालम् ।

शिवं शंकरं कामदं कामदण्डं, जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जो त्रैलोक्य के प्राणियों से वन्दनीय हैं, अन्तरंग बहिरंग लक्ष्मी से जिनका शरीर विभूषित है, जो सर्वकाल सर्व जीवों को शुभ मंगलरूप है, शिव हैं, शंकर हैं, मनोवांछित वस्तु के दाता हैं, कामदेव को दमन करने वाले हैं, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का यह उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।1।।

2- महान्तं प्रशान्तं गुणानां करण्डं, भवाम्भोधिमग्नागिनां यं तरण्डम् ।

जितं येन कर्मारिसिंह प्रचण्डं, जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जो महान हैं, प्रशान्त (परम शान्त) हैं, अनन्त गुणों के करण्ड (पिटारे) हैं, संसार-सागर में निमग्न प्राणियों को निकालकर उस पार (मोक्ष) पहुंचाने के लिए तरण्ड (जहाज) हैं, जिन्होंने कर्म-शत्रुरूप प्रचण्ड सिंह को जीता है, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।2।।

3- महादेवदेवं महापुण्यकायं सुरेन्द्रैः कृतो यस्य जन्माभिषेकः ।

नुतः सर्वलोकैर्महाभक्ति मद्भिजिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जो महादेव के भी देव हैं, जिनका शरीर महापवित्र है, जिनका जन्माभिषेक देवेन्द्रों ने (सुमेरुगिरि पर) किया है, महाभक्ति वाले सर्व लोगों से जो नमस्कृत हैं, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।3।।

4- अशोकः प्रभामण्डलं पुष्पवृष्टिः, मृगेन्द्रासनं दुन्दुभिश्चामरौघः ।

विभासा अअ तपत्रत्रयं यत्य भाषा, जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- अशोक वृक्ष, प्रभामण्डल, पुष्पवृष्टि, सिंहासन, दुन्दुभि-नाद, चामर-समूह, उज्जवल श्वेत छत्रत्रय और दिव्यध्वनि ये आठ प्रातिहार्य जिनके सदा प्रस्तुत रहते हैं, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।4।।

5- अछेद्यं अभेद्यं जनानन्ददायि विमुक्त्यंगनालालसं सर्वभद्रम् ।

शभैर्लक्षणैर्लक्षितं यस्य गात्रम् जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जिनका शरीर अछेद्य है,अभेद्य है, प्राणियों के आनन्ददायी हैं, मुक्ति-लक्ष्मी की लालसा वाला है, या मुक्ति सभी जिसे पाने की अभिलाषा रखती हैं, सर्व प्रकार से भद्र (कल्याणरूप) हैं, उत्तम शुभ लक्ष्णों से लक्षित है, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।5।।

6- विमायं विकायं विमानं विशोकं विरूपं विदम्भं विदिव्यम् ।

विवादाहरं शासनं यस्य लोके जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जो माया-रहित हैं, काय-विहीन हैं, मान-रहित हैं, शोक-रहित हैं, शब्द-रहित हैं, रूप-रहित हैं, दम्भ-रहित हैं, विशिष्ट दिव्यरूप हैं, जिनका शासन विवाद को हरण करने वाला है, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।6।।

7- जिनेन्द्रापृगामी कलंकेन हीनं, कलालकृंतं कौमुदं कान्तियुक्तम् ।

खगेन्द्राभिसेव्यं महेन्द्राभिवन्द्यं, जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जिनेन्द्रदेव का धर्मचक्र उनके आगे-आगे चलता है, कलंक से रहित है, कलाओं से अलंकृत है, चन्द्रिका के समान कान्ति से युक्त है, विद्याधरों के इन्द्रों के द्वारा सेवनीय है, महेन्द्रों के द्वारा वन्दनीय है, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।7।।

8- नराणां सुराणां समूहैः सुवन्द्यं, सुसौख्याकरं यस्य पादारविन्दम् ।

जितं येन पारीषहं वीरसेनं जिनेन्द्रस्य तस्योत्तमं सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जिनके चरण-कमल मनुष्यों और देवों से समूहों से सदा वन्दनीय हैं, उत्तम सुख के आकर (निधान) हैं, जिन्होंने वीर सेना के समान दुःख परीषहों को जीता है, ऐसे उन जिनेन्द्रदेव का उत्तम सुप्रभात सदा बना रहे ।।8।।

इति श्री वीरसेन विरचित सुप्रभाताष्टकम् ।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

14- सुप्रभाताष्टकस्तोत्रम्

1- निःशेषावरणद्वयस्थिति-निशाप्रान्तेअन्तरायक्षयो-

द्योतेमोहकृते गते च सहसा निद्राभरे दूरतः ।

सम्यग्ज्ञानदृगक्षियुग्ममभितो विस्फारितं यत्र त-

ल्लब्धं यैरिह सुप्रभातमचलं तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।

भावार्थ- सम्पूर्ण ज्ञान और दर्शन गुण को आवरण करने वाले ज्ञानावरण और दर्शनावरण इन दोनों कर्मों के, तथा अन्तराय के क्षय के अज्ञानरूपी निशा (रात्रि) के क्षय हो जाने पर, ज्ञानरूप सूर्य के प्रकाश होने पर, सहसा ही मोहकर्म-जनित निद्रा का भार सर्वथा दूर हो जाने पर सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दर्शन रूप दो नेत्र जिन्होंने सर्व ओर विस्फारित किये हैं और अविचल सुप्रभात को जिन्होंने प्राप्त किया है, ऐसे जिनेन्द्रदेव को मेरा नमस्कार है ।।1।।

2- यत्सच्चक्रसुखप्रदं यदमलज्ञानप्रभाभासुरं,

लोकलोकपदप्रकाशनविधिप्रौढं प्रकृष्टं सकृत् ।

उद्भूते सति यत्र जीवितमिव प्राप्तं परं प्राणिभि-

स्त्रैलोक्याधिपतेर्जिनस्य सततं तत्सुप्रभातं स्तुवे ।।

भावार्थ- श्री जिनेन्द्र देव का जो सुप्रभात सर्व प्राणियों को सुख का देने वाला है, जो निर्मल ज्ञान की प्रभा से भासुरायमान है, लोक-अलोक रूप पदों के प्रकाशन की विधि से प्रौढ़ हैं, प्रकृष्ट (सर्वोत्तम) है, एक बार जिसके उदय होने पर जिसका सदा सद्भाव बना रहता है, जिसके प्रकट होने पर सभी प्राणी मानों जीवन को ही प्राप्त करते हैं, ऐसे त्रैलोक्याधिपति श्री जिनेन्द्र के सुप्रभात की मैं सदा स्तुति करता हूं ।।2।।

3- एकान्तोद्वतवादिकौशिकशतैर्नष्टं भयादाकुलै-

र्यातो यत्र विशुद्धखेचरनुतिव्याहारकोलाहलः ।

यत्सद्धर्मविधिप्रवर्तनकरं तत्सुप्रभातं परं

मान्यार्हत्परमेष्ठिनो निरूपमं संसारसन्तापहृत् ।।

भावार्थ- एकान्तवाद से उद्धत वादिरूपी आकुल-व्याकुल हुए सैकड़ों कौशिकों (उलूकों) के द्वारा भय से जहां पर विशुद्ध खेचरों (पक्षी और विद्याधरों) का नमस्कार-युक्त वचन-व्यापार रूप कोलाहल नष्ट हो गया, ऐसे समय में मान्य अर्हंत परमेष्ठियों का यह अनुपम और सद्धर्म का प्रवर्तन करने वाला उत्तम सुप्रभात संसार के संताप को दूर करने वाला है ।।3।।

4- सानन्दं सुरसुन्दरीभिरभितः शक्रैर्यदा गीयते

प्रातः प्रातरधीश्वरं यदतुलं वैतालिकैः पठ्यते ।

यच्चाश्रावि नभश्चरैश्च फणिभिः स्तत्कण्ठकैः गीयते-

तद्धन्दे जिनसुप्रभातमखिलं त्रैलोक्यहर्षप्रदम् ।।

भावार्थ- जिस समय सुर-सुन्दरियों के साथ आनन्द पूर्वक सर्व ओर से इन्द्रों के द्वारा जिनका गुण-गान किया जाता है, प्रतिदिन प्रातःकाल जिस अतुलनीय अधीश्वर का स्तवन वैतालिकों (वन्दीजनों) के द्वारा पढ़ा जाता है, विद्याधरों और नागेन्द्रों के द्वारा उनके मधुर कण्ठों के द्वारा जिनका यश गाया जाता हुआ सुना जाता है, ऐसे समय त्रैलोक्य में हर्ष को देने वाले जिनेन्द्र देव के सुप्रभात की मैं वन्दना करता हूं ।।4।।

5-उद्योते सति यत्र नश्यति तरां लोकेअघचौरो अचिरं,

दोषेशो अन्तरतीव यत्र मलिनो मन्दप्रभो जायते ।

यत्रानीतितमस्ततेविटनाज्जाता दिशो निर्मला,

वन्द्यं नन्दतु शाश्वतं जिनपतेस्तत्सुप्रभातं परम् ।।

भावार्थ- जिसके उद्योत होने पर इस लोक में पाप रूपीचोर अतिशीघ्र सर्वथा विनष्ट हो जाते हैं, और यह दोषेश (दोषा-रात्रि का स्वामी चन्द्र तथा दोषों का स्वामी मोह) अन्तरित होता हुआ मलिन और मन्द प्रभा वाला हो जाता है, जिस समय अनीति रूपी अन्धकार-पटल के विघटन से सभी दिशाएं निर्मल हो जाती हैं, ऐसा यह जिनेन्द्र देव का वन्दनीय यह उत्तम सुप्रभात सदा आनन्द करता रहे ।।5।।

6-मार्ग यत्प्रकटीकरोति हरते दोषानुषंगस्थितिं,-

लोकानां विद्धाति दृष्टिमचिरादर्थावलोकक्षमाम् ।

कामासक्तधियामपि कृशयति प्रीतिं प्रियायामिति,

प्रातस्तुल्यतयापि कोअपि महिमा पूर्वः प्रभाते अर्हताम् ।।

भावार्थ- अर्हन्त-भगवन्तों का जो सुप्रभात सन्मार्ग को प्रकट करता है, दोषा (रात्रि) के और दोषों के अनुषंग से उत्पन्न हुई विषम या विकृत स्थिति को दूर करता है, लोगों की दृष्टि को शीघ्र पदार्थों के देखने में समर्थ करता है कामासक्त बुद्धि वाले लोगों की अपनी प्रियाओं में प्रीति को कृश करता है, इस प्रकार अर्हन्त भगवन्तों के प्रभात में प्रातः काल की तुलना में कोई अपूर्व ही महिमा है ।।6।।

7- यदभानोरपि गोचरं न गतवच्चित्ते स्थितं तत्तमो,

भव्यानां दलयत्तथा कुवलये कुर्वद्विकासश्रियम् ।

तेजः सौख्यहतेरकर्तृ सदिदं नक्तञ्चराणामपि,

क्षेमं वो विदधातु जैनमसमं श्रीसुप्रभातं सदा ।।

भावार्थ- भव्य जीवों के चित्त में स्थित जो अन्धकार सूर्य को भी दृष्टि गोचर नहीं हो सकता है, उसे विदलन करने वाला, कुवलयों (रात्रि में खिलने वाले कमलों) में विकास-लक्ष्मी को करने वाला, तेजस्वी होकर भी सुख का विनाश नहीं करने वाला नक्तचरों (रात्रि में विचरने वाले जीवों) को भी सद्रूप (कलायाणकारी) यह श्री जिनदेव का असम (जिसके समान अन्य कोई नहीं) ऐसा यह सुप्रभात आप लोगों के लिए सदा मंगल करे ।।7।।

8- भव्याम्भोरुहनन्दिकेवलरविः प्राप्नोति यत्रोदयं

दुष्कर्मोदयनिद्रया परिहृतं जागर्त्ति सर्वे जगत् ।

नित्यं यैः परिपठ्यते जिनपतेरेतत्प्रभाताष्टकं

तेषामाशु विनाशमेति दुरितं धर्मः सुखं वर्धते ।।

भावार्थ- जिस समय भव्य जीवरूपी कमलों को आनन्दित करने वाला केवलज्ञानरूपी सूर्य उदय को प्राप्त होता है, जिस समय दुष्कर्मों के उदयरूपी निद्रा से व्याप्त यह सारा जगत् जागता है, उस समय जो लोग जिनेन्द्र देव के इस सुप्रभाताष्टक स्तोत्र को नित्य पढ़ते हैं, उनके पाप शीघ्र विनाश को प्राप्त होते हैं और उनका धर्म और सुख बढ़ता है ।।8।।

15- सुप्रभातस्तवनम्

1- विद्याधरार-नरोरग-यातुधान-सिद्धासुराधिपतिसंस्तुतपादपद्म ।

हेमद्युते वृषभनाथ युगादिदेव श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- जिनके चरण-कमल विद्याधर, अमर, मनुज, उरग, यातुधान (राक्षस) सिद्ध (यक्ष) और असुरकुमार जाति के देवों के इन्द्रों के द्वारा संस्तुत हैं, जो सुवर्ण जैसे कान्ति की धारक हैं, और इस युग के आदि तीर्थंकर देव हैं ऐसे हे श्री मज्जिनेन्द्र वृषभनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।1।।

2- प्रोत्फुल्लचारूनवचम्पकपुष्पगौर पापापनोदकिरणैः करशान्तिरूढ ।

रागादिदोषरहिताजित चारुमूर्ते श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे प्रफुल्लित सुन्दर नव चम्पक पुष्प के सदृश्य गौर वर्ण, पाप-विनाशक किरणों के द्वारा जगत् में शान्ति के विधायक, रागादि दोषों से रहित, चारुमूर्ति हे श्रीमज्जिनेन्द्र अजितनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।2।।

3- प्रोद्दामदर्पमकरध्वज कृष्णवर्त्म तापोपशान्ति-निपुणोन्नतवारिवाह ।

चामीकराभ हतसंभव शम्भवेश श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- अत्युग्र दर्पवाले कामदेव को भस्म करने के लिए प्रचण्ड अनल, जगत्संताप को शान्त करने के लिए निपुण उन्नत वारिवाह (मेघ), सवर्ण-आभावाले और भव-विनाशक हे श्रीमज्जिनेन्द्र शम्भवनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।3।।

4- सद्धर्म-मार्गगहनानुगतार्थसार वाणीविशेषरचितप्रहतान्धकार ।

देवा अभिनन्दन सुवर्णविभाभिराम श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- सद्धर्म के गहन मार्ग अनुगमन करने वालों के लिए सारभूत अर्थ वाले, दिव्य वाणी-विशेष से जगत् में प्रसरित अन्धकार के नाशक, स्वर्ण-आभास से अभिराम हे श्रीमज्जिनेन्द्र अभिनन्दन देव, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।4।।

5- मज्जद्भवाम्बुनिधिभव्यसमस्तजन्तोः हस्तावलम्ब सुमते निहतारिवर्ग ।

विद्युच्छटाभ विषयेन्धनवरूप श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- भव-सागर में डूबते हुए समस्त भव्य प्राणियों को हस्तावलम्बन देने वाले, कर्मशत्रु के विनाशक, बिजली जैसी कान्ति के धारक, विषयरूप ईधन के भस्म करने के लिए वह्निस्वरूप हे श्रीमज्जिनेन्द्र सुमति नाथ आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।5।।

6- पद्म प्रभाभिनव पद्मदलायताक्ष पद्मानन प्रकट पादसुपद्मलक्ष्म ।

पद्म प्रभा-पटल पाटलदेहदीप्त श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- अभिनव (विकसित) पद्मदल के समान आयत नेत्र वाले पद्मसमान मुखवाले, चरणों में कमल-लक्षण चिन्ह के धारक, पद्म-प्रभा-समूह से पाटल वर्ण दीप्त देह के धारक हे श्रीमज्जिनेन्द्र पद्मप्रभ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।6।।

7- दुष्टाष्ट-कर्म-कठिनोन्नतपासग्रन्थि-सम्भेदनैक निरतामर-राजनूत ।

कीरांगरागरुचिरांग-विभो सुपार्श्व श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- दुष्ट अष्ट कर्मों की कठिन और उन्न्त विशाल) पास-ग्रन्थि के सम्यक् प्रकार भेदन करने में एक मात्र निरत, (संलग्न) अमरराजों (इन्द्रों) से नमस्कृत, कीर (शुक पक्षी) के समान हरित कान्ति से विभूषित देह वाले, हे श्रीमज्जिनेन्द्र सुपार्श्वप्रभो, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।7।।

8- चापल्य हीनेकृत चिन्तवितानयोग चिन्ताधिगम्य विमलामल तत्वरूप ।

चन्द्रप्रभाभ विमलेन्दुकलावदात श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- चपलता-रहित चित्त के वितान (विस्तार) योग वाले, चिन्तन (ध्यान) से ज्ञात होने के योग्य, विमल-अमल तत्त्वस्वरूप, विमल-चन्द्रकला के समान अवदात (पवित्र-निर्मल) हे श्रीमज्जिनेन्द्र चन्द्रप्रभदेव, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।8।।

9- रागान्धदेव-कृतशासन-शासनैक ध्यानाग्निदग्धदुरितारि-तमोवितानम् ।

प्रालेयशैलशिखरप्रभ पुष्पदन्त श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- रागान्ध देवों के ऊपर शासन करने वाले इन्द्रों के भी एकमात्र शासक ध्यानाग्नि के द्वारा पापरूप तमोवितान के दग्ध करने वाले, प्रालेय (हिम) शैल की शिखर के समान प्रभा के धारक हे श्रीमज्जिनेन्द्र पुष्पदन्त, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।9।।

10- निर्वाणसौख्यकर दुर्लभ वस्तुभूत रत्नत्रयाभिरत मानव-कामधेनो ।

हेमप्रभाभ घन शीतल शीतलांशो श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- निर्वाण (मोक्ष) के सुख को करने वाले, दुर्लभ वस्तुभूत रत्नत्रय से शोभायमान, मानवों के लिए कामधेनु, हेम-प्रभा के समान देह की प्रभावाले, हे श्रीमज्जिनेन्द्र शीतलांशु शीतलनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।10।।

11- हेमाचलाभ भयवर्जित सौम्यमूर्ते श्रेयो असि शर्ममय शान्तविकारभाव ।

लोकाग्रसारपदवीस्थिरसंस्थितात्मन् श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हेमाचल (स्वर्णगिरि) के सदृश शरीर कान्ति के धारक, निर्भय सौम्यमूर्ति, आनन्दमयी, शान्त हो गये हैं विकारभाव जिनके, ऐसे हे लोक के अग्रभाग पर सार पद जो मोक्ष उसमें स्थिर रूप से स्थित हैं आत्मा जिनकी, ऐसे हे श्रीमज्जिनेन्द्र श्रेयान्शनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।11।।

12- सन्ध्योपरागरुचिरांग सहस्त्रभानोस्तेजो अधिकाखिलजगत्प्रतिवन्द्यमान ।

दुर्वारवैरिबलमर्दन वासुपूज्य श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- सन्ध्याकालीन लालिमा के सदृश रुचिर अंगवाले सहस्त्रों सूर्यों के तेज से भी अधिक तेजवाले, समस्त जगत् से पूज्य, दुर्वार वैरि वर्ग के बल का मर्दन करने वाले हे श्रीमज्जिनेन्द्र वासुपूज्य, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।12।।

13- गन्धर्वयक्षखचरोरगदैत्यनाथ-सम्पूजितांहियुगलोत्तम हाटकाभ ।

ध्वस्तारि-वर्ग विमलामल चारुरूप श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- गन्धर्व, यक्ष, विद्याधर, उरग (नाग) और दैत्यों के अधिपतियों से संपूजित उत्तम चरण-युगल वाले, सुवर्ण-कान्ति के धारक, कर्म-शत्रु-समूह के विध्वंसक, सुन्दर रूपशालिन् हे श्रीमज्जिनेन्द्र अमल-विमलनाथ आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।13।।

14- स्वर्गापवर्गसुखसंयम-संविधान शुद्ध प्रबुद्ध सदनन्त मुनीन्द्रचन्द्र ।

राजीवकेशरपरागरुचे अनन्त श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- स्वर्ग और अपवर्ग-(मोक्ष-) सुख के संगम का सम्यक् विधान करने वाले शुद्ध, प्रबुद्ध, मुनीन्द्र-चन्द्र, और राजीव-(पद्म-) केशर-पराग के समान कान्ति के धारक हे श्रीमज्जिनेन्द्र अनन्तनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।14।।

15- धर्म प्रसिद्धसकलागमवस्तुभूत पदमोपलभ्यनवभानुसमानदीप्ते ।

मात्सर्यहीन नरकान्तक कामशत्रो श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- प्रसिद्ध समस्त आगमों के वस्तुस्वरूप, पद्म में उपलब्ध नव-(उदय-कालीन) सूर्य के समान दीप्ति धारक, मात्सर्य-विहीन, नरकों के अन्त करने वाले और कामदेव के शत्रु हे श्रीमज्जिनेन्द्र धर्मनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।15।।

16- शान्त प्रशान्त सकलाहित शान्तिनाथ, देवाधिराजनुतपादयुगारविन्द ।

तप्तानलाभ भवनिर्मथनैकभाव श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- सर्व प्रकार के अहितों (अकल्याणों) के प्रशान्त करने वाले, शान्ति के मूर्तरूप, देवों के अधिराजों से नमस्कृत चरण-कमल-युगल वाले, प्रज्वलित अनल-(अग्नि-) के समान आभा वाले और भव के निर्मथन करने वाले अद्वितीय भावों के धारक, हे श्रीमज्जिनेन्द्र शान्तिनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।16।।

17- कुन्थो कुतीर्थकरदेवमतंगजोघविद्रावणाभिरत-केसरिशक्तिसोरः ।

सन्ताप्तचारुतपनीयसमानदीप्ते श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- कुतीर्थों के प्रवर्तक देवरूप गजों के समूह के विदारण में अभिरत (संलग्न या उद्यत) केशरी (सिंह) के समान शक्तिशालिन् और संतप्त तपनीय (सुवर्ण) के समान सुन्दर दीप्ति वाले, हे श्रीमज्जिनेन्द्र कुन्थुनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।17।।

18- देवाधिनाथ-मनुजेश्वर-नागराज सन्दोहशुभ्रतरसंविधृतातपत्र ।

हेमप्रभाभ रतिनायकदर्पहा अर- श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- देवों के अधिपति (इन्द्र) मनुष्यों के ईश्वर (चक्रवर्ती) और नागराज (धरणेन्द्र) इन तीनों के समूह द्वारा शुभ्रतर (अतिउज्जवल) छत्रत्रय जिनके ऊपर धारण किये जा रहे हैं ऐसे हे हेमप्रभाभ, रतिनायक-(कामदेव) के दर्प के अपहारक श्रीमज्जिनेन्द्र अरनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।18।।

19- मात्सर्य-मान-मद-मोह-जरा-विराम, जन्मामयारिपरिवर्जितचित्तवृत्ते ।

जाम्बूनदाभ भुवनेश्वर मल्लिनाथ श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे मात्सर्य-मान-मद-मोह-जरा-विराम, हे जन्म (मरणादि) रोग-रहित चित्तवृत्ति वाले, हे स्वर्णाभ, हे भुवनेश्वर श्रीमज्जिनेन्द्र मल्लिनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।

20- क्षीणारिवर्ग मुनिसुव्रत सुव्रतेश, संसार-सागर-समुत्तरणैकसेतो ।

भिन्नेन्द्रनील-बहलोल्लसितांगराग, श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे शत्रु-समूह-विनाशक, हे सुव्रतेश्वर, हे संसार-सागर-समुत्तरण के लिए अद्वितीय सेतु, हे उद्भिन्न इन्द्रनील मणि की प्रभा से प्रभासित देह कान्ति के धारक, श्रीमज्जिनेन्द्र मुनिसुव्रतनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।20।।

21- कारुण्यसार वरधर्मरथ त्रिलोक-चेतो अभिलष्यफलपुष्पककल्पवृक्ष ।

मायाविहीन नमिनाथ सुवर्णवर्ण, श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे कारुण्यसार, हेवरधर्मरथ, हे त्रिलोकी जनों के मनोभिलषित फल और पुष्प को देने के लिए कल्पवृक्ष, हे माया-विहीन, हे सवर्णवर्ण, श्रीमज्जिनेन्द्र नमिनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।21।।

22- दग्धाष्टकर्मदलनोन्नत रिष्टनेमिनाथातसीकुसुमन्निभ भव्यमूर्ते ।

नष्टारिवर्ग यदुवंशनभोमृगांक, श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- अष्ट कर्मों के दलन और दग्ध करने से उन्नत स्वरूप को प्राप्त, अतसी(अलसी) के कुसुम-सदृश भव्य मूर्ति वाले, अरि-वर्ग के विनाशक, यदु-वंशरूप गगन के चन्द्र हे श्रीमज्जिनेन्द्र अरिष्ट नेमिनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।22।।

23- प्राग्दुष्ट-पुष्ट-कमठासुरदर्पदाह-दाहोपघातकरनिवृत पार्श्वनाथ ।

चारुप्रियंगुसमवर्णविराजितांग, श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- पूर्वभव की दुष्टता से पुष्ट कमठासुर के दर्प का दाहकर उसके अन्तर्दाह का भी विनाश करके उसे निराकुल बनाने वाले, सुन्दर प्रियंगु-पुष्प के समान वर्ण से विराजित देह के धारक श्रीमज्जिनेन्द्र पार्श्वनाथ, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।23।।

24- सर्वार्थसाधक समुद्रगभीर धीर चामीकरस्फुरदनिन्दतकायकान्ते ।

चिन्तामणे भुवनभूषण वर्धमान श्रीमज्जिनेन्द्र विमलं तव सुप्रभातम् ।।

भावार्थ- हे सर्व अर्थ के साधक, हे समुद्र समान गंभीर, हे धीर, हे सवर्ण के समान स्फुटायमान अनिन्दित (निर्मल) देह-कान्ति के धारक, हे चिन्तामणि, हे भुवन-भूषण श्रीमज्जिनेन्द्र वर्धमान स्वामिन्, आपका यह सुप्रभात सदा विमल बना रहे ।।24।।

25-दिव्यप्रभातकमलावलिकास्वरूपांग कण्ठेनसर्वकलसंग्रथितां क्रमेण ।

ये धारयन्ति मनुजा जिननाथ-भक्तया, निर्वाणपादपफलं खलु ते लभन्ते ।।

भावार्थ- दिव्य प्रभातरूप कमलों की अवलिका वाली, क्रमशः सर्वकलाओं से संगुम्फित इस स्तुति रूप माला को जो मनुष्य जिनेन्द्रदेव की भक्ति-द्वारा कण्ठ से धारण करते हैं अर्थात् कण्ठस्थ रखते हैं, वे निश्चय से निर्वाणरूप कल्पवृक्ष के फल को प्राप्त करते हैं।।25।।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

16- अथ श्रीजिनेन्द्रभक्तिस्तोत्रम्

1- नश्यति नामनि यस्य गृहीते पूततमे दुरितं जनतानाम् ।

शीतमिवार्चिषः दुःसहमग्ने स्तोमि तमेकं श्रीजिननाथम् ।।

भावार्थ- जिनके परम पवित्र नाम के लेने पर ही प्राणियों के पाप इस प्रकार पलायमान हो जाते हैं जैसे कि अग्नि की दुःसह ज्वाला में निमग्न जीव का शीत-जनित दुःख दूर हो जाता है, ऐसे उन एकमात्र श्री जिननाथ की मैं स्तुति करता हूं ।।1।।

2- विघ्नम शेषमपास्यति येषां भक्तिमत्तः स्मरणं कृतमात्रम् ।

ध्वंसितकल्मषश्रृंखलबद्धास्ते वितरन्तु सुखं मम सिद्धाः ।।

भावार्थ- जिसके स्मरण-मात्र करने से भक्तिमान् पुरुष के समस्त विघ्न विनष्ट हो जाते हैं और जिन्होंने अनादि काल से श्रृंखला-बद्ध कल्मषों (द्रव्य और भावकर्मों) को विध्वस्त कर दिया है, वे सिद्ध भगवन्त मुझे सुख प्रदान करें ।।2।।

3- काम-कषाय-करीन्द्रमृगेन्द्राः जातिजरामरणाहिखगेन्द्राः ।

पाद-पयोजनतात्रिदशेन्द्राश्चैतसि मे निवसन्तु मुनीन्द्राः ।।

भावार्थ- जो कामदेव और कषाय रूपी गजराजों के (विदारण के) लिए मृगराजों (सिंहों) के समान हैं, जन्म जरा और मरण रूपी सर्पों के लिए खगराज (गरुड़) के सदृश हैं, और जिनके चरण-कमलों में देवों के इन्द्र भी नत-मस्तक हैं, ऐसे सर्व मुनीन्द्र (आचार्य, उपाध्याय और साधु) मेरे मन में सदा निवास करें ।।3।।

4- मानव-दानव-देवविभूतिं यो अर्चितमांस्तनुते तनुमद्भ्यः ।

धर्म-निलम्पहमहिरुहमेनं दर्शनमाद्यमहं प्रणमामि ।।

भावार्थ- भक्ति से अर्चित जो सम्यग्दर्शन शरीर-धारियों के लिए मानव, दानव (असुर) और देव की उत्कृष्ट विभूति को विस्तारता है और जो धर्म रूप......के लिए वृक्ष के समान है ऐसे रत्नत्रय धर्म का जो आद्य सम्यग्दर्शन है, उसे मैं नमस्कार करता हूं ।।4।।

5- घोरमाति तमान्सि निरस्य द्योतयते भुवनं भुवि शेषम् ।

भास्कर-बिम्बभिवा अअर्हमीडे ज्ञानमहं तदपाकृतदोषम् ।।

भावार्थ- जो भूमण्डल के घोरतम अज्ञानान्धकार को दूर कर इस समस्त भुवन को सूर्य के बिम्ब के समान प्रकाशित करता है ऐसे, और समान दोषों के निराकरण करने वाले अर्हत्प्ररूपित सम्यग्ज्ञान की मैं पूजा करता हूं ।।5।।

6- कर्ममल-व्यपनोदनदक्षं संयतहंसनिषेवितमध्यम् ।

श्रीजिनशासनपावनतीर्थं नौमि विवेकचरित्रजलोरमिम् ।।

भावार्थ- जो कर्म-मल को धोने में दक्ष है, संयत (संयमी साधु) रूपी हंसों से जिसका मध्यभाग संसेवित है और जो भी जिनशासन का पवित्र तीर्थ है ऐसे विवेकमय जल-तरंगवाले जलाशयरूप सम्यक् चारित्र को मैं नमस्कार करता हूं ।।6।।

(ऐ.प.दि.जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

17- चतुर्विंशतितीर्थंकर स्तुति

1- निखिलगुणनिधानं मुनिजनमानं केवलबोधपरमशिवम् ।

वरवीर्यमुदारं दर्शनसारं संस्तवीमि परमात्मपदम् ।।

भावार्थ- जो समस्त गुणों का निधान है, मुनिजनों का सन्मान-स्वरूप है, केवलज्ञान और परम शिवपद का दाता है, परम वीर्यवाला और उदार है ऐसे सम्यग्दर्शन के सारभूत परमात्म पद की मैं परम भक्ति से स्तुति करता हूं ।।1।।

2- जयवृषभ विहित-वृषनिचयसेव, जयतादजित क्षतकामदेव ।

जयसंभव विभवकलंकदूर, जयतादभिनन्दन भुवनसूर ।।

भावार्थ- धर्म-समुदाय की-उत्तम क्षमादि दशों धर्मों की विधिवत् सेवा (धारण) करने वाले हे वृषभ जिनेन्द्र, आपकी जय हो। कामदेव के विनाशक हे अजितनाथ, आपकी जय हो। जगत् के वैभवरूप कलंक से रहित हे संभवनाथ, आपकी जय हो। संसार को प्रकाशित और जागृत करने के लिए सूर्य स्वरूप हे अभिनन्दन स्वामिन्, आपकी जय हो ।।2।।

3- जय सुमतिनाथ गुणगणनिवास, जय पद्मप्रभ दुर्मतनिरास ।

जय मरकतमणिनिभ जिन सुपार्श्व, जयचन्द्रप्रभ जनताप्तपार्श्व ।।

भावार्थ- गुण-गण के निवास हे सुमतिनाथ, आपकी जय हो। दुर्भतों का निराकरण करने वाले हे पद्मप्रभ, आपकी जय हो। मरकतमणि के समान प्रभा के धारक हे सुपार्श्व जिन, आपकी जय हो। जगत् के जीवों को अपना अभय-सामीप्य प्रदान करने वाले हे चन्द्रप्रभ, आपकी जय हो ।।3।।

4- जय पुष्पदन्त हतनिखिलदोष, जय जय शीतल गतरागरोष ।

जयताच्छेयांस कवीन्द्रकव्य, जय वासुपूज्य जिन मुदित-भव्य ।।

भावार्थ-समस्त दोषों के विनाशक हे पुष्पदन्त, आपकी जय हो। राग-दोष से रहित हे शीतल जिनेन्द्र, आपकी जय हो। कवीन्द्रों के द्वारा स्तुत्य हे श्री श्रेयांस जिन, आपकी जय हो। भव्यों को प्रमुदित करने वाले हे वासुपूज्य, आपकी जय हो ।।4।।

5- जय विमल कमलदलकोमलांग, जयतादनन्तकृतसप्तभंग ।

जय धर्मशर्मकर्मणि धुरीण, जय शान्तिजिन प्रशमप्रवीण ।।

भावार्थ- कमल-दल के समान कोमल देह के धारक हे विमलनाथ, आपकी जय हो। सप्तभंगरूप वाणी के विधायक हे अनन्तजिनेन्द्र, आपकी जय हो। सुख प्रदान करने वालों में अग्रणी हे धर्मनाथ, आपकी जय हो। हे प्रशम-प्रवीण शान्तिजिन, आपकी जय हो ।।5।।

6- जय कुन्थुदेव करुणानिधान, जयतादर परमपदप्रधान ।

जय मल्लिजिनाधिप परमगोध, जय मुनिसुव्रत केवल-विबोध ।।

भावार्थ- हे करुणानिधान कुन्थुदेव, आपकी जय हो। हे परम-पद अरनाथ, आपकी जय हो। परम विशुद्ध वाणी के धारक मल्लिजिनेन्द्र, आपकी जय हो। केवलज्ञानरूप विशिष्ट वोध के हे मुनिसुव्रतनाथ, आपकी जय हो ।।6।।

7- जय नमिजिन नमितसुरासुरेन्द्र, जयनेमिनाथ क्रमकंजचन्द्र ।

जय पार्श्व कमठमदमठ-विनाश, जयवर्धमान जनपूरिताश ।।

भावार्थ- सुर और असुरों के इन्द्रों से नमस्कृत हे नमिनाथ, आपकी जय हो। हे कुमुदचन्द्र नेमिनाथ, आपकी जय हो। कमठासुर के मदरूप मठ- के विनाशक पार्श्वप्रभो, आपकी जय हो। जगज्जनों की आशाओं को पूर्ण करने वाले हे वर्धमान स्वामिन्, आपकी जय हो ।।7।।

8- इति परमानन्दं शिवतरुकन्दं यःस्तवीति जिपतिनिचयम् ।

स भवति परमात्मा प्रथमजितात्मा समवेति त्रिभुवनविजयम् ।।

भावार्थ- इस प्रकार जो परम आनन्द स्वरूप, शिव-तरु के कन्दरूप श्री जिनपति-(तीर्थंकर-) समुदाय की मन वचन काय से सम्यक् प्रकार स्तुति करता है, वह प्रथम आत्म-विजय करके तदन्तर त्रिभुवन आपकी जय हो का विजय करता है और तत्पश्चात् परमात्मा बन जाता है ।।8।। --

18-चतुर्विंशतिजिनस्तवनं

1- नाभेयप्रमुखा रतीशविशिखा-हंकार-सर्वंकषा-

स्तेनः शर्म जगत्प्रकाशनपरा कुर्वन्तु तीर्थंकराः ।

यन्नामस्मरणाद् भवान्तरभवा प्रायः प्रयान्ति क्षयं

पापव्यापदपारदुस्तरतमः-श्रेणी च सूर्योदयात् ।।

भावार्थ- रति-पति (कामदेव) के तीक्षण वाण-विषयक अहंकार का सर्वथा उन्मूलन करने वाले और जगत् के लिए यथार्थ मोक्ष मार्ग के प्रकाशन में परायण सर्व तीर्थंकर भगवन्त हमारे लिए सुख को करें, जिनके नाम-स्मरण से भवान्तरों में उपार्जित पापरूप आपदाओं की दुस्तर तमः श्रेणी सूर्योदय से अन्धकार के समान क्षण- मात्र में क्षय को प्राप्त हो जाती है ।।1।।

2- वृषभं वृषकेतुं कृतकरणं, कनकनिभं जनविपदपहरणम् ।

गजगामिनमजितं गजकेतुं, हेमाभं प्रकटितशुभहेतुम् ।।

भावार्थ- कृतकृत्य, स्वर्ण-समान आभा के धारक, और प्राणियों के विपदा के अपहरण करने वाले ऐसे वृषभ-चिह्न से विराजित वृषभनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। गजगामी,गजचिह्न शोभित स्वर्णिम आभा के धारक और शुभ-निमित्तों के प्रकाशक अजितनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।2।।

3- शम्भवमभिभवहरमरिहन्त, स्वर्णनिभं हयचिह्नमनन्तम् ।

चम्पकमिवमभिनन्दनमीशं, कपिकेतं ननधंशमिताशम् ।।

भावार्थ- पराभव के अपहारक, कर्म-शत्रुओं के विनाशक, स्वर्णिम कान्ति के धारक और अश्व-चिह्न से विराजित अनन्त गुणवन्त शम्भवनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। चम्पक-पुष्प के समान कान्ति वाले, कपि चिह्न-युक्त, सर्व पापों से सर्वथा रहित और आशाओं के प्रशामक ऐसे अभिनन्दन जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं ।।3।।

4- वरदं कोकचिन्हमघहरणं, सुमतिं हेमनिभं यतिशरणम् ।

अंगीकृतसरोजमनवद्यं, पद्मप्रभमरुणाभमनिन्द्यम् ।।

भावार्थ- अघ-अपहारक, वर-(अभीष्ट फल) दायक, स्वर्णिम आभावाले और साधुओं को शरण देने वाले कोक-(चकवा) चिह्न-विभूषित सुमतिदेव को मैं नमस्कार करता हूं। अनवद्य (सर्वदोष-रहित) अनिन्द्य,अरुणवर्ण और कमल-चिह्न वाले पद्मप्रभ जिनेश्वर को मैं नमस्कार करता हूं ।।4।।

5- जिनसुपार्श्वममलं हरिताभं, स्वस्तिकांकमवनीकृतशोभम् ।

चन्द्राङ्कं चन्द्रप्रभदेवं, धवलं सुरपतिकृतपदसेवम् ।।

भावार्थ- निर्मल हरित-वर्ण, स्वस्तिक-चिह्न-विराजित और भूमण्डल की शोभा करने वाले सुपार्श्व जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं। चन्द्र-चिह्न विभूषित, धवल वर्ण और इन्द्रों द्वारा जिनके चरण-कमल-पूजित हैं, ऐसे चन्द्रप्रभ देव को मैं नमस्कार करता हूं ।।5।।

6- तुहिनाभं मकरांकमुदारं, पुष्पदन्तजिनपं जितमारम् ।

स्वर्णनिभं शीतलमपशंकं, श्री वृक्षाङ्कम्स्तभवपङ्कम् ।।

भावार्थ- हिम-समान आभा के धारक, मकर-चिह्न-विराजित, उदार और काम-विजेता पुष्पदन्त जिननाथ को मैं नमस्कार करता हूं। स्वर्णिम-आभा-धारक, शंका-विदारक, भव-पंक-प्रक्षालक और श्री वृक्ष-लांछित शीतलनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।6।।

7- श्रेयान्सं वरचम्पकगौरं, गण्डककेतनमुदितमुदारम् ।

वासुपूज्यमरुणाभममायं, महिषकेतुमसमं निरुपायम् ।।

भावार्थ- उत्तम चम्पक पुष्प के समान गौर वर्ण वाले, गेंडा के चिह्न से विभूषित, परम उदय को प्राप्त और अति उदार श्रेयान्स जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं। अरुण-आभा वाले अभाय (छल-प्रपंच-रहित) निरुपाय ( ) अनुपम और महिष-चिह्न- विभूषित ऐसे वासुपूज्य को मैं नमस्कार करता हूं ।।7।।

8- क्रोडकेतुमहितौघविनाशं, विमलं हेमनिभं विगताशम् ।

सेद्धाचिमनन्तजिनेशं, काञ्चनाभ वचनीशमहेशम् ।।

भावार्थ- जगज्जीवों के अहित के विनाशक, स्वर्ण-कान्ति के धारक, आशाओं से रहित और क्रोड- (सूकर) चिह्न-विभूषित विमलनाथ को मैं नमस्कार करता हूं । कांचन की कान्ति

वाले, दिव्य ध्वनि के स्वामी और सेही-चिह्न के धारक अनन्त जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं ।।8।।

9- धर्मं कुलिशकेतुमपदोषं, पीतशरीरं कृततनुशोषम् ।

हरिणांकं हेमाभमशोकं, शान्तिजिनं रञ्जितवरलोकम् ।।

भावार्थ- सर्व दोषों से रहित, पीत-वर्ण देह के धारक, संयम-साधना से शरीर के शोषक, ऐसे वज्र-चिह्न-विभूषित धर्म जिनेश्वर को मैं नमस्कार करता हूं। जगत के शोक-रहित करने वाले, लोक के अनुरंजक, स्वर्ण-कान्ति धारक और हरिण-चिह्न विभूषित श्री शान्तिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।9।।

10- कुन्थुंछागचिह्नमसमानं, तप्तचारुतपनीयसमानम् ।

अरनाथं गौरांगमदर्पं, मीनाङ्कं हतमन्मथसर्पम् ।।

भावार्थ- सन्तप्त कांचन के समान सुन्दर देह-कान्ति के धारक एवं अनुपम कीर्ति वाले छाग-(अज) चिह्न विभूषित कुन्थुनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। गौर-वर्ण, दर्प-रहित, कामनाग के विनाशक, और मीन-चिह्न-विभूषित अरनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।10।।

11- मल्लिनाथमङ्गीकृतकुम्भं, शातकुम्भनिभकायमदम्भम् ।

जलदाभं मुनिसुव्रतमसमं, कच्छपाङ्कमगीकृतसुषमम् ।।

भावार्थ- कुम्भ-(कलश-) चिह्न के धारक, शातकुम्भ-(स्वर्ण) समान देहकान्ति से विभूषित, और सर्व प्रकार के दम्भों से रहित वीतराग श्री मल्लिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जल्द (मेघ) के समान आभा वाले, अनुपम, सुषमा के धारक और कच्छप-चिह्न विभूषित मुनिसुव्रत को मैं नमस्कार करता हूं ।।11।।

12- नमिजिनमुत्पलकेतुमसङ्गं, वरचामीकरसदृशसदङ्गम् ।

शङ्खकेतुमनघं जिननेमिं, वारिदनिभतनुशुभरथनेमिम् ।।

भावार्थ- उत्पल- (कमल) चिह्न-धारक, सर्वसंग-विवर्जित, चामीकर-(स्वर्ण) सदृश देह वाले नमिजिन को मैं नमस्कार करता हूं। शंख-चिह्न विभूषित, वारिद (मेघ) सदृश देह धारक धर्मरूप रथ के श्रेष्ठ नेमिस्वरूप श्री नेमिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।12।।

13-पार्श्वजिनं नागाङ्कमजेयं, हरितं प्रकटितहेयाहेयम् ।

केतूकृतसिंहं वरनाथं वन्दे वीरं गौरवनाथम् ।।

भावार्थ- नाग (सर्प) चिह्न-विभूषित, हरितवर्ण वाले और हेय-उपादेय के प्रकाशक, अजेय पार्श्व जिनको मैं नमस्कार करता हूं। सिंह चिह्न के धारक गौरवशाली जैन शासन के अन्तिम सर्व श्रेष्ठ स्वामी ऐसे श्री वर्धमान जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूं ।।13।।

14- अमितगुणगणानां श्रीजिनानामधीते,

स्तवमनघमिमं यः प्रातरुत्थाय भक्त्या ।

शिवसुखकमलाय जायते वीतजन्म

पतिरणनुविभूतेः स्तोत्रसत्पद्मनन्दी ।।

भावार्थ- जो भव्य भक्ति के साथ प्रातःकाल उठकर अनन्त गुण-गणों के धारक श्री तीर्थंकर जिनेन्द्रों का यह निर्दोष-पाप-अपहारक स्तवन पढ़ता है, वह पद्मनन्दी अनन्त वैभव का पति होकर, जन्म-मरण से विमुक्त हो शिव-सुखरूप कमल का धारक होता है ।।14।।

इति श्री पद्मनन्दि विरचित चतुर्विंशति जिनस्तवन समाप्तम्

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

19-चतुर्विंशतिजिनस्तवनं तृतीयम्

1- वन्दे तानमरप्रवेकमुकुटप्रोत्तारणप्रस्फुर-

द्रामस्तोमविनिश्रितं पदनखा भीभास्वसुत्करा रेजिरे ।

येषां तीर्थंकरेशिनां सुरसरिद्वारिप्रवाहो यथा

दिव्यं देवनितम्बिनीस्तनगलत्काश्मीरपूरान्विता ।।

भावार्थ- जिन तीर्थंकर ईश्वरों के नम्रीभूत देवों के मुकुटों से जटित मणियों के प्रस्फुरित प्रभा-पुंज से विमिश्रित चरण-नख सूर्य की प्रकाशमान किरणों के समान इस प्रकार शोभित

हो रहे है, जिस प्रकार कि देवांगनाओं के स्तनो से गलते हुए काश्मीर-केशर के फरसे समन्वित आकाश-गंगा का दिव्य प्रवाह शोभित होता है ।।1।।

2- वृषभ त्रिभुवनपतिशतवन्द्यं, मन्दरगिरिमिव धीरमनिन्द्यम् ।

वन्दे मनसिजगजमृगराजं, राजिततनुमजितं जिनराजम् ।।

भावार्थ- त्रिभुवनेश-शत-इन्द्र-वन्दनीय, सुमेरु-गिरि-समान धीर, और अनिन्द्य (निर्मल यशस्वी) ऐसे वृषभ जिनेश्वर को मैं नमस्कार करता हूं। कामरूप गज के मद-भंजन करने के लिए मृगराज- (सिंह-) समान, सुन्दर शरीर-धारक आजित जिनराज को मैं नमस्कार करता हूं ।।2।।

3- सम्भवदुज्ज्वलगुणमहिमानं, सम्भवजिनपतिमप्रतिमानम् ।

अभिनन्दनमानन्दितलोकं, विद्यालोकितलोकालोकम् ।।

भावार्थ- जिनके उज्ज्वल गुणों की महिमा संसार में प्रकट हो रही है, जिनके सदृश इस लोक में अन्य कोई नहीं है ऐसे सम्भव जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूं। सर्वलोक को आनन्दित करने वाले, और अपनी केवलज्ञान रूप विद्या से लोक-अलोक को आलोकित करने वाले, अभिनन्दन नाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।3।।

4- सुमतिं प्रशमितकुनयसमूहं, निर्दलिताखिलकर्मसमूहम् ।

वन्दे तं पद्मप्रभदेवं, देवासुरनरकृतपदसेवम् ।।

भावार्थ- मिथ्या नयों (मतों) के समूह के प्रशाभक और समस्त कर्म-समूह के विनाशक सुमतिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जिनके चरण-कमलों की देव, असुर और मनुष्य सेवा करते हैं ऐसे त्रिभुवन पूज्य उस पद्म प्रभदेव को मैं नमस्कार करता हूं ।।4।।

5- सेवकमुनिजनसुरुचिरपार्श्वं, प्रणमामि प्रथितं च सुपार्श्वम् ।

त्रिभुवनजननयनोत्पलचन्द्रं, चन्द्रप्रभमघवर्जिततन्द्रम् ।।

भावार्थ- जिनके दोनों सुन्दर पार्श्वभाग सेवा-आराधना करने वाले मुनिजनोंसे शोभित हैं, अर्थात् जो मुनिजनों के मध्य विराजमान हैं ऐसे सुप्रसिद्ध सुपार्श्वनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जो त्रिभुवनवर्ती सर्व जीवों के नयन-कमलों को विकसित करने के लिए चन्द्र के

समान हैं और सर्व प्रकार के पाप तन्द्रा-प्रमाद आदि से रहित हैं, ऐसे निर्मल स्वरूप के धारक चन्द्रप्रभ स्वामी को मैं नमस्कार करता हूं ।।5।।

6- सुविधिं विधिधवलोज्ज्वलकीर्तिं, त्रिभुवनपतियुतकीर्त्तितमूर्तिम् ।

भूतलपतिनुतशीतलनाथं, ध्यानमहानलहुतरतिनाथम् ।।

भावार्थ- भाग्योदय से धवल उज्ज्वल कीर्तिवाले और त्रिभुवन के इन्द्रों से जिनका यशोगान किया जा रहा है ऐसे सुविधिनाथ (पुष्पदन्त) को मैं नमस्कार करता हूं। जिन्होंने शुक्लध्यानरूप महा अनल (अग्नि) के द्वारा रतिनाथ (कामदेव) को भस्म कर दिया है, ऐसे भूतल के स्वामियों से पूजित शीतलनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।6।।

7- स्पष्टानन्तचतुष्टयनिलयं, श्रेयोजिनपतिममगतविलयम् ।

श्रीवसुपूज्यसुतं नुतपादं, भव्यजनप्रियदिव्यनिनादम् ।।

भावार्थ- जो विशद प्रत्यक्ष केवलज्ञानादि अनन्तचतुष्टय के आलय हैं, और ममता भाव को विलय कर चुके हैं ऐसे श्रेयान्स जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं। श्री वसुपूज्य राजा के पुत्र और भव्य जनों को प्रिय दिव्य देशना देने वाले पूज्यपाद वासुपूज्य को मैं नमस्कार करता हूं ।।7।।

8- कोमलकमलदलायतनेत्रं, विमलं केवलशस्यसुक्षेत्रम् ।

निर्जितकान्तिमनन्तजिनेशं, वन्दे मुक्तिवधूपरमेशम् ।।

भावार्थ- कोमल-कमल-दल के समान आयत (दीर्घ) नेत्रवाले और केवलज्ञानरूप शस्य (धान्य) के उत्तम क्षेत्र ऐसे विमलनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जगत् की कान्ति को जीतने वाले और मुक्ति-वधु के परम ईश ऐसे अनन्त जिनेश को मैं नमस्कार करता हूं ।।8।।

9- धर्मं निर्मलशर्मापन्नं, धर्मपरायणजनतासन्नम् ।

शान्तिं शान्तिकरं जनताय, भक्तिभरं क्रमकमलनुताय ।।

भावार्थ- निर्मल सुख को प्राप्त और धर्म-परायण-जनता के समीपवर्ती ऐसे धर्मनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जगत् की जनता को शान्ति-प्रदान करने वाले और भक्ति-भारित जनों से जिनके चरण-कमल नमस्कृत हैं ऐसे शान्तिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।9।।

10- कुन्थु गुणमणिरत्नकरण्डं, संसारामबुधितरणतरण्डम् ।

अमरीनेत्रचकोरीचन्द्रं, अरपरमं पदविनुतमहेन्द्रम् ।।

भावार्थ- जो अनन्त गुण मणिरूप रत्नों के करण्ड (मंजूषा) हैं, और संसार-सागर को तिरने (पार करने) के लिए तरण्ड (नौका) हैं, ऐसे कुन्थुनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जो देवांगनाओं के नयन-चकोरों के लिए चन्द्र के समान हैं, बड़े बड़े इन्द्रों से जिनके चरण नमस्कृत हैं ऐसे अरनाथ को मैं प्रणाम करता हूं ।।10।।

11- उद्धतमोहमहाभटमल्लं, मल्लिफुल्लसरप्रतिमल्लम् ।

सुव्रत्तमपगतदोषनिकायं, चरणाम्बुजयुवदेवनिकायम् ।।

भावार्थ- जो उद्धत मोहरूप मल्ल के मान-मर्दन करने के लिए महान् सुभट रूप प्रतिमल्ल हैं, मल्लिका लता के प्रफुल्लित पुष्पों के सरोवद-तुल्य हैं, ऐसे मल्लि जिनेश्वर को मैं नमस्कार करता हूं। जो दोष-समुदाय से रहित हैं और देव निकाय (समूह) से जिनके चरण-युगल पूजित हैं, ऐसे सुव्रतनाथ को मैं नमस्कार करता हूं ।।11।।

12- नेमिनमिं गुणरत्नसमुद्रं, योगिनिरूपितयोगसमुद्रम् ।

नीलश्यामलकोमलगात्रं, नेमिस्वामिन ममेनोदात्रम् ।।

भावार्थ- जो गुणरूप रत्नों के सागर हैं और योगि जनों के लिये योग-(ध्यान-समाधि) योगरूप समुद्र का निरूपण करने वाले हैं, ऐसे नमिनाथ को मैं नमस्कार कता हूं। जिनका देह नील-श्यामल और कोयल है, और जो पाप-विदारण के लिए दात्र-(शस्त्र विशेष)स्वरूप हैं, ऐसे नेमिनाथ स्वामी को मैं नमस्कार करता हूं ।।12।।

13- फणिफणमण्डपमण्डितदेहं, पार्श्व हितगत-निजसन्देहम् ।

वीरमपारचरित्रपवित्रं, कर्ममहीरुहशूललवित्रम् ।।

भावार्थ- जिनका देह नागराज के फण-मण्डप से मण्डित है, और जिन्होंने सर्व सन्देहों को दूर कर दिया है, ऐसे पार्श्वनाथ को मैं नमस्कार करता हूं। जिनका अपार चरित्र परम पवित्र है और जो कर्मरूप वृक्ष के छेदन के लिए शूलरूप लवित्र (कुठार) के समान हैं, ऐसे वीर प्रभु को मैं नमस्कार करता हूं ।।13।।

14- संसार प्रतिमप्रतिबोधं, परिनिःक्रमणं केवलबोधम् ।

वन्दे मन्दरमस्तकपीठे, कृतजन्माभिषवं नुतपीठे ।।

भावार्थ- जो संसार के सर्व जीवों को प्रतिबोध देने वाले हैं, परिनिष्क्रमण कल्याणक के धारक हैं, केवल बोध(ज्ञान) से विराजमान हैं और जिनका सुमेरु की शिखर पर अवस्थित सिंहासन पर जन्माभिषेक किया गया है, ऐसे सर्व तीर्थंकरों को मैं नमस्कार करता हूं ।।14।।

15- अननिगुणनिबद्धमर्हतां माघनन्दी-

व्रतिरचितसुवर्णानेकपुष्पव्रजानाम् ।

स भवति जयमालां यो विधते सुकण्ठे,

प्रियपतिरमरश्रीमोक्षलक्ष्मीवधूनाम् ।।

भावार्थ- अर्हंतो के अपरिमित गुणों से निबद्ध, माघनन्दि-व्रती से रचित सु-वर्णरूप अनेक पुष्पों के समूह वाली इस जयमाला को अपने सुन्दर कण्ठ में धारण करता है, वह अमर श्री और मुक्ति-लक्ष्मीरूप बधु का प्रिय पति होता है ।।15।।

इति श्री माघनन्दिव्रति रचित चतुर्विंशति जिनस्तवनं समाप्तम्

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

20- चतुर्विंशति-तीर्थंकर-मंङ्गलस्तवः

1- आद्यस्कन्दः सर्वविद्यालतानाभन्तज्योर्तिर्विश्वतत्त्वप्रणेता ।

देवो दिव्यध्यानमानेकतानो नाभेःसूनुर्मंगलं नो ददातु ।।

भावार्थ- जो समस्त विद्या रूपी लताओं के आद्य स्कन्दर (मूल) हैं, अन्तज्योति-स्वरूप हैं, विश्व तत्त्व के प्रणेता हैं, दिव्य ध्यान में एकाग्र होकर निमग्न हैं, ऐसे श्री नाभि-सूनु ऋषभदेव हम सब को मंगल-प्रदान करें ।।1।।

2- नाजौ जितो यद्विषदन्तरान्तरैस्ततो अजितश्री जिन इत्युदीरितः ।

सुमंगलानामधिमंगलालयः स मंगलं नौ वितनोतु धीरधीः ।।

भावार्थ- जो युद्ध में आन्तरिक शत्रुओं के द्वारा नहीं जीते जा सके, इसलिए जो श्री अजित जिन इस नाम से विख्यात हैं, तथा जो सुमंगलों के पदम मंगलास्पद हैं ऐसे धीर बुद्धि श्री अजित जिन हमारा मंगल करें ।।2।।

3-यमधिगम्य जनो यमवानसौ निजनियम्य-नियामकभावतः ।

समभवं कुरुते निजसम्भवः स इह मंगलदः स्तुतिसम्भवः ।।3।।

भावार्थ- जिनको प्राप्त कर मनुष्य अपने नियभ्य-नियाभक भावों से यमवान् होता है और जो सम-भावी पुरुष को अपने समान करते हैं ऐसे स्वयंभू सम्भवनाथ इस लोक में स्तुति -संभव मंगल-दाता हों ।।3।।

4- यदीयनामोच्चरणप्रसंगतो अप्यनन्तभंगोक्षणभागजं-जनः ।

श्रयत्यजस्त्रं श्रियमंगसंगतः समंगलायास्त्वभिनन्दनोजिनः ।।

भावार्थ- जिनके नामोच्चारण के प्रसंग से अनन्त दुःखों को देखने वाला पापी मनुष्य भी निरन्तर लक्ष्मी को प्राप्त करता है, ऐसे अभिनन्दन जिन मेरे शरीर में विराजमान होकर हम सब के मंगल के लिए होवें ।।4।।

5- अतुलमहिमपारं सारमन्तर्दधानो निजमखिलमनन्तं प्राप्य सन्तिष्ठते अग्रे ।

शिवसुखशुभसम्पल्लब्धवान् यस्य नित्यं सुमति सुमतिनाथो मंगलं नस्तनोतु ।।

भावार्थ- अतुलनीय अपार महिमा वाले सारभूत आत्मस्वरूप की अन्तरंग में धारण करने वाले, तथा अपने समस्त अनन्त गुणों को प्राप्त करके जो लोक के अग्रभाग पर विराजमान हैं, ऐसे सुमति स्वरूप सुमतिनाथ हमारा मंगल करें ।।5।।

6- भवति भुवनदीपी यत्प्रसादात्क्षणेन कृतनिजनिजकर्मा लब्धशर्मा जनौद्यः ।

त्रिभुवनकृतसेवो नः स पद्मामेदेवो दिशतु विरतिलाभानन्तरं मंगलानि ।।

भावार्थ- जिनके प्रसाद से यह जन-समुदाय अपने-अपने कर्मों का नाश करके क्षण मात्र में भुवन-प्रकाशक बनकर सुख को प्राप्त करता है और त्रिभुवन जिनकी सेवा करता है ऐसे वे पद्मप्रभ देव चारित्र लाभ के पश्चात् हमें मंगल प्रदान करें ।।6।।

7- निर्मग्नं भवसागरे वरधिया ध्वस्तस्वरूपं जगत्

येनोद्घृत्य घृतं घृतो घृतिवता शश्वत्सुपार्श्वः पुनः ।

शुम्भद्-भोगभरावनद्धवपुषां कान्त्या ज्वलज्ज्योतिषां

देयान्तः स च मंगलानि सततं श्रीमत्सुपार्श्वो जिनः ।।

भावार्थ- इस संसार-सागर में निर्मग्न एवं आत्म स्वरूप से विनष्ट ऐसे जगत् को जिस धैर्यशाली ने अपनी उत्तम बुद्धि से उद्धार करके सदा अपने सुपार्श्व में धारण (स्थापित) किया, तथा जिन्होंने जाज्वल्यमान कान्ति के धारक एवं प्रकृष्ट भोग-भार से व्याप्त देह वाले देवों को अपनी कान्ति से पार्श्ववर्ती किया है ऐसे वे श्रीमाने सुपार्श्वजिन हमें सदा मंगलों को देवें ।।7।।

8- यस्य प्रभापरिकप्रतिभिन्नमन्तर्मोहान्धकारमखिलं प्रलयं प्रयाति ।

विघ्नं च नाश्रयति संश्रयते विभूतिं चन्द्रप्रभः प्रभुरसौ कुरुताच्छिवं नः ।।

भावार्थ- जिनकी प्रभा के परिमण्डल से आन्तरिक मोहान्धकार प्रलय को प्राप्त हो जाता है जगत् विघ्न को प्राप्त नहीं होता है, प्रत्युत विभूति को प्राप्त करता है, ऐसे वे चन्द्रप्रभ प्रभु हमारा कल्याण करें ।।8।।

9- पुष्णाति लोकं विधुनोति शोकं क्षुणोति दुःखं सुखमातनोति ।

जनस्य यः संजनयत्यशेषं श्रीपुष्पदन्तः स शिवं तनोतु ।।

भावार्थ- जो लोक का पोषण करते हैं, शोक को दूर करते हैं, दुःख का विनाश करते हैं और सुख का विस्तार करते हैं। तथा सर्वजनों के सभी अभीष्टों को पूरा करते हैं, वे श्री पुष्पदन्त हमारा कल्याण करें ।।9।।

10- ज्ञानाद्यशेषामलभावयुक्तं तत्त्वं विशुद्धं भविनो वदन्ति ।

यद्धर्ममुग्धा किल विभ्रमन्तः श्रीशीतलो असौ तनुताच्छिवं नः ।।10।।

भावार्थ- भव्यजीव जिनके द्वारा प्रतिपादित विशुद्ध तत्त्व को ज्ञानदि समस्त निर्मल भावों से युक्त कहते हैं और जिस धर्म को नहीं जानने वाले मुग्ध लोग संसार में परिभ्रमण करते हैं ऐसे वे श्री शीतलनाथ हमारा कल्याण करें ।।10।।

11- श्रियः प्रभूत्यै किल यः स्वभावात्संस्मर्यमाणः सकलं करोति ।

जगज्जयी यस्य न जन्म भूयः श्रेयान् जिनो असौ स शिवं करोतु ।।

भावार्थ- जो लक्ष्मी की-कलयाण की-बृदधि के लिए स्वभावतः जनों के द्वारा स्मरण किये जाने पर सर्व मनोरथ को पूर्ण करते हैं, जो तीनों जगत् के विजेता हैं, जिनका पुनर्जन्म नहीं होगा, ऐसे वे श्रेयान् जिनेन्द्र हमारा कल्याण करें ।।11।।

12- सुरेन्द्र-नागेन्द्र-नरेन्द्रवर्गः पूजाक्षणे क्षोभमुपैति यस्य ।

स सर्वपूजाक्षण एव देवः श्रीवासुपूज्यः शिवतातिरस्तु ।।12।।

भावार्थ- सुरेन्द्र नागेन्द्र और नरेन्द्र-समूह जिसकी पूजा के समय क्षोभ (संभ्रम) को प्राप्त होते हैं, वे सर्व पूजोत्सव वाले श्रीवासुपूज्य हमारे शिव (कल्याण) के विस्तारक होवें ।।12।।

13- जगत्रयं यो विमलीकरोति स्वधामनाम्ना विजयं तु वर्गम् ।

निसरगशुदधः स्वत एव बुद्धः स नः शिवश्री विमलां ददातु ।।

भावार्थ- जो तीन जगत् को विमल करते हैं, और अपने पराक्रमी नाम से शत्रु वर्ग को जीतते हैं, जो स्वभावतः शुद्ध एवं स्वतः प्रबोध को प्राप्त हुए वे विमलनाथ हमारे लिए विमल मुक्ति लक्ष्मी को देवें ।।13।।

14- अनन्तमिथ्याम्बुधिपारमेति श्रुत्वा वचो अनन्तगुणं यदस्य ।

अनन्तमाप्नोति जिनः सुखादेस्त्वनन्तनाथः स शिवं करोतु ।।

भावार्थ- जिनके अनन्त गुणमय वचन को सुनकर मनुष्य अनन्त मिथ्यात्वरूप महोदधि को पार करता है और अनन्त सुख आदि गुणों को प्राप्त करता है वे अनन्तनाथ जिनेन्द्र हमारा कल्याण करें ।।14।।

15- नित्याद्यनेकान्तमतावकाशं प्रकाश्य लोके विदुषामशेषम् ।

पापाज्जगद्यो विभवाञ्चकार श्रीधर्मनाथः स शिवं करोतु ।।

भावार्थ- जिन्होंने लोक में विद्वानों को नित्य-अनित्य आदि अनेक धर्मात्मक अनेकान्तमत के विस्तार को प्रकाशित कर एकान्तरूप पाप-पंक से जगत् का उद्धार किया, वे श्री धर्मनाथ हमारा कल्याण करें ।।15।।

16- विभावनायाः प्रतिपद्य लीलां प्रशान्तमेतत्पुनरोपशान्तिम् ।

विश्व वचोमिर्नन्‌ यस्य शान्त्यै शान्तिर्जिनो नः कुरुतात्प्रशान्तिम् ।।

भावार्थ- विशिष्ट (तीर्थंकर, चक्रवर्ती, और कामदेव पद के योग्य) लीला को पाकर अर्थात तीनों पदों का उपभोग करके पुनः जो स्वयं भावनाओं की उपशान्ति को प्राप्त हुए और जिनके वचनों के द्वारा सारा विश्व शान्ति को प्राप्त हुआ, वे श्री शान्ति जिनेन्द्र परम शान्ति के लिए हमें शान्ति प्रदान करें ।।16।।

17- कुन्थ्वाद्यनेकविधजन्तुदयां चकार यस्तामुपेत्य जनतापदयां चकार ।

भव्यप्रबोधजनकान्यमलानि स श्री-कुन्थुर्जिनो दिशतु वः शुभमंगलानि ।।

भावार्थ- जिन्होंने कुन्थु-पिपीलिका आदि अनेक प्रकार के क्षुद्र जन्तुओं की स्वयं दया पालन की और भव्यों को प्रबोध देने वाले जिनके निर्मल वचन हैं, उनके द्वारा जनता को दया का उपदेश देकर उसे सर्व ताप से रहित किया, वे श्री कुन्थु जिन तुम सबको शुभ मंगल देवें ।।17।।

18- अरति-शोक-भयादि-विनाशकृत् कृतसमस्त-समस्त-हितंकरः ।

शुभसमाश्रय-संक्रमशंकरस्त्वरजिनः कुरुतात् स च मंगलम् ।।

भावार्थ- जो अरति शोक और भय आदि के विनाश करने वाले हैं, समस्त जगत् के हितंकर हैं, समस्त शुभ के आश्रयभूत हैं, जिनके चरण-कमल सुख को प्रदान करते हैं ऐसे श्री अरजिनेन्द्र सबका मंगल करें ।।18।।

19- यः कर्मारातिहारी विशदतरगुण-ग्रामधारा-विशारी

ज्ञानानन्ददैकचारी विषमनगमहा दुःखदोषापहारी ।

क्षीणः क्षीणोपचारी शुभसमिति-सभासंगसम्पद्विचारी

देवः श्रीमल्लिनाथो दिशतु तब ममाप्येष मांगल्यकारी ।।

भावार्थ- जो कर्मरूप शत्रुओं के विनाशक हैं, जो अति निर्मल गुण-ग्राम (समूह) रूप जल-धारी के विशारी (मीन) सदृश विहारी हैं, एक मात्र ज्ञानानन्द में विचरण करने वाले हैं, विषम वृक्षों से व्याप्त दुर्गम पर्वतों के दुःखों और दोषों के अपहारक हैं, स्वयं क्षीण कर्म-क्षयी (कृश) हैं, फिर भी क्षीण (दुर्बल) जनों का उपचार करने वाले हैं, जो शुभ समिति और सभारूप समवशरण-सभादा के साथ विचरण-शील हैं, ऐसे श्रीमल्लिनाथ देव तुम्हें भी मंगल देवें और मेरे लिए भी मंगलकारी होवें ।।19।।

20- विश्व-विश्वम्भरा-भार-हार-धर्म-धुरन्धरः।

देयान्नो मंगलं देवो दिव्यश्रीमुनिसुव्रतः ।।

भावार्थ- जो समस्त विश्वम्भरा (पृथ्वी) के भार को दूर करने वाले धर्म की धुरा के धारक हैं, ऐसे दिव्य श्री मुनिसुव्रत देव हमें मंगल देवें ।।20।।

21- यच्छीलशैलराजो दुर्लघ्यो लंघ्यते महासत्त्वैः ।

सोअयं श्रीनमिनाथः सतां मांगल्यकारको भूयात् ।।

भावार्थ- जिन महासत्त्वशाली ने दुर्लंघ्य (अठारह हजार भेद वाले) शीलरूप शैलराज को लांघ लिया है, अर्थात् शैलेशी अवस्था को पार कर दिया है, वे श्री नमिनाथ सन्त जनों के मंगल-कारक होवें ।।21।।

22- त्यक्त्वा प्रपञ्चरुचिरं रुचिरं स्वराज्यमन्तःस्फुरद्विभवभावभराव कीर्णम् ।

तूर्णं तुरीयपदमाश्रित एव देवो नेमिः श्रियं दिशतु नः शुभमंगलस्य ।।

भावार्थ- छल प्रपंचों से जगत् के राज्य को छोड़कर जो अन्तरंग में स्फुरायमान वैभवरूप भावों के भार से व्याप्त स्वराज्य स्वरूप चतुर्थ पद (मोक्ष) को शीघ्र प्राप्त हुए, ऐसे श्री नेमि जिनेन्द्र देव हमारे शुभमंगल-लक्ष्मी को देवें ।।22।।

23- यन्नामस्मृतिमात्रतोअपि निखिलं निघ्नन्ति विघ्नं जनाः

देवं मानवमन्यदप्युपगतं सन्तः समन्तादिह ।

प्रीतः प्रान्त-विनीतिवैरि-विषम-व्यापार सारेण यः

सो अयं मंगलमातनोतु सुधियां श्री पार्श्वनाथो जिनः ।।

भावार्थ- जिनके नाम के स्मरण मात्र से भी सन्त जन सर्व ओर से आये हुए दैविक, मनुष्यक और अन्य तिर्यंचादि-जनित समस्त विघ्नों (उपद्रवों एवं उपसर्गों) को नाशकर देते हैं, जो स्वयं समीपवर्ती एवं नीति से विहीन कमठरूप वैरी के विषम व्यापार-सार से प्रसन्न रहे हैं, ऐसे श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र सुबुद्धिशाली जनों का मंगल करें ।।23।।

24- लोकेषु सर्वेष्वपि वर्धमानः प्रीत्या जनस्येह सुवर्धमानः।

प्रवर्धमानं क्षतमानयानो देयाच्छुमं नौ जिनवर्धमानः ।।

भावार्थ- जो सभी लोकों में प्रीति से वर्धमान हैं, इस लोक में जो सुवर्धमान हैं, जिन्होंने मान के यान (जहाज) को विनष्ट कर दिया है, ऐसे श्री वर्धमान जिन हमें निरन्तर प्रवर्धमान शुभ मंगल को देवें ।।24।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

21- श्री शान्तिनाथस्तवनम् (1)

1- वाचामगम्यो मनसो अपि दूरः कायः कथं वेत्तुमलं जडो यः ।

थ तथापि भक्त्या त्रितयेन वन्द्यः श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

भावार्थ- जो वचनों के अगम्य हैं और मन से भी दूर हैं, उन्हें यह जड़ काया (देह) जानने के लिए कैसे सम्भव है ? तो भी वे मेरे द्वारा भक्ति पूर्वक तीनों योगों से वन्दनीय श्री शान्तिनाथ मुझे शरण देवें ।।1।।

2- महीलता अहिर्मृगराड् मृगः स्यादिभः स्तभो अम्भोदचयो दवाग्निः ।

नाम्नापि यस्यासुमतां स देवः श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

भावार्थ- जिनके नाम से जीवों के लिए सर्प मही-लता बन जाता है, मृगराज (सिंह) मृग हो जाता है, गजराज स्तभ (बकरा) हो जाता है और दावानल जल वर्षा ने वाला बादल बन जाता है वे श्री शान्तिनाथ मुझे शरण देवें ।।2।।

3- यः संवरारिर्न कदा अअस्त्रवो अमूच्छुचिर्न सन्तायकरः परेषाम् ।

चक्री तथाप्यत्र न च द्विजिह्वः श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

भावार्थ- जो संवरारि हैं, फिर भी जिनके कभी भी जिनके अशुभ कर्मस्राव नहीं हुआ। (जो संवर-आस्रव-निरोध का शत्रु हैं, वह अशुभास्रव कैसे नहीं होगा ? इसका परिहार यह है कि भ0 शान्तिजिन सबंर-राक्षस के शत्रु हैं, फिर भी उनके अशुभ कर्मास्रव नहीं होता 1- वे शुचिरूप (ग्रीष्मकाल रूप) हैं फिर भी अन्य प्राणियों को सन्ताप करने वाले नहीं हैं। इसका परिहार यह है कि वे सदा पवित्र स्वरूप के धारक हैं, अतः सब को शान्ति के दाता हैं। भगवान् चक्री (सर्प) हैं, तथापि द्विजिह्व (दो जीभ) वाले सांप नहीं हैं। इसका परिहार यह है कि आप चक्रवर्ती हैं और सब पर एकसा वचन-व्यापार करते हैं, ऐसे श्री शान्तिनाथ मुझे शरण देवें ।।3।।

4- विघ्नव्युदासस्त्रिजगच्च दासः प्रकायमिन्द्रैः प्रणतः सदासः ।

सम्पत्तिकर्त्ता विपदेकहर्ता श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

5- न दुर्गतिनै यशोविनाशो नचाल्पमृत्युर्न रुजां प्रवेशः ।

यत्सेवया भद्रभिदं चतुर्धा श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

6- कृताञ्जलिर्यस्य सदा पिनाकी सहाच्युतस्तस्य कियन् पिनाकी ।

योगैकलक्षः कृतिकल्पवृक्षः श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

7- न यस्त्रिवेदी परमस्त्रिवेदी निराकृता येन विदां त्रिवेदी ।

तपः कुठारस्मरदारुभेदी श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

8- निर्दोषरूपः पदनम्रभूपः कलंकमुक्तः सदृगश्ममुक्तः ।

आनन्दसान्द्रो भुवनैकचन्द्रः श्रीशान्तिनाथः शरणं ममास्तु ।।

9- स्तुतिकृतेयं जिननाथभक्त्या विदामवरेण श्रुत श्रुतसागरेण ।

बोधेः समाधेश्च निधानभूतामिमां सद्दा अअदायजनो जिनो अस्तु ।।

श्री श्रुतसागर विरचितं शान्तिनाथस्तवनं समाप्तम् ।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

22- श्री शान्तिनाथ स्तोत्रम् (2)

1- त्रैलोक्याधिपतित्वसूचनपरं लोकेश्वरेरुद्धृतं,

यस्योपर्युपरीन्दुमण्डलनिभं छत्रत्रयं राजते ।

आस्त्रोतोद्गतकेवलाह्वयरुचा निर्भात्सितार्कप्रभः,

सो अस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपतिः श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

2- सर्वज्ञः स हि देव एव परमो नान्यस्त्रिलोकीपतिः,

सन्त्यस्यैव समस्ततत्त्वविषया वाचः सतां सम्मताः ।

एतद् घोषयतीव यस्य विबुधैरास्फालितो दुन्दुभिः,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपतिः श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

3- दिव्यस्त्रीमुखपंकजैकमुकुर-प्रोल्लासिनानामणि-

स्फारीभूत- विचित्ररश्मिरचिते नम्रामरेन्द्रायुधैः ।

सच्चित्रीकृत वातवर्त्मनि लसत्सिंहासने यः स्थितः,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपतिः श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

4- गन्धाकृष्टमधुव्रतव्रजरुतैर्व्यापारिता कुर्वती

स्तोत्राणीव दिवः सुरैः सुमनसां वृष्टिर्यदग्रेअभवत् ।

सेवा अअयातसमस्तविष्टपपति-स्तुत्या अअश्रयस्पर्धया,

सोस्मान् पातु निरञ्जनों जिनपतिः श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

5- खद्योतैः किमुतानलस्य कणिके शुभ्राभ्रलेशावधो

सूर्याचन्द्रमसाविति प्रगुणितो लोकाक्षयुग्मैः सुरैः ।

तर्क्यन्ते हि यदग्रतोअपि विशदं तद्यस्य भामण्डलं,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपतिः श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

6- यस्याशोकरुचिर्विनिद्रसुमनसोगुच्छप्रसक्तैः क्वणद्

भृंगेभक्तियुतैः प्रभोरहरहर्गायन्नवा अअस्ते यशः ।

शुभ्रं साभनयो मरुच्चल्लतापर्यन्तपाणिश्रिया

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपति श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

7- विस्तीर्णा अखिलवस्तुतत्वकथनापार प्रवाहोज्ज्वला

निःशेषार्थिनिषेवितातिशिशिरा शैस्नाद्दिवामापगा ।

प्रोद्भूता हिसरस्वतीश्वरनुता विश्वं पुनाना यतः,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपति श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

8- लीलोद्वेल्लितबाहुकंकणत्कारप्रहृष्टैः सुरैः,

चञ्चच्चन्द्रमरीचिरप्रंचयसमाकारैश्रचलच्चामरैः ।

नित्यं यः परिवीज्यते अभिजगतां नाथस्तथाप्यस्पृहः,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपति श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

9- निःशेषश्रुतबोधवृद्धिमतिभिः प्राज्यैरुदारैरपि

स्तोत्रैर्यस्य गुणान्वयस्य हरिभिः पारो न सम्प्राप्यते ।

भव्याम्भोरुहनन्दिकेवलरविर्भक्त्या मयापि स्तुतः,

सोअस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपति श्रीशान्तिनाथः सदा ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

23- श्री शान्तिनाथस्तवनम् (2)

1- नानाविचित्रं भवदुःखराशि, नानाप्रकारं मोहानि पाशी ।

पापानि दोषाणि हरन्ति देवा, इह जन्म शरणं तव शान्तिनाथ ।।

2- संसारमध्ये मिथ्यत्वचिन्ता, मिथ्यात्वमध्ये कर्माणि बंधम् ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

3- कामस्य क्रोधं माया विलोभं, चतुःकषायैरिह जीवबंधम् ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

4- जतस्य मरणं यूथस्य वचनं वै सत्ति जीवं बहु जन्म दोषम् ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

5- चारित्र हीनो नर जन्म बन्धे, सम्यक्तवरत्नं प्रतिपालयन्ते ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

6- पदवाक्यहीनो कठिनस्य चित्तो, परजीवनिन्दा मनसावबन्ध ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

7- परद्रव्यचोरी परदारदेवा, हिंसादि-कृष्याद्यनन्तानुबन्धः ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

8- पुत्राणि मित्राणि कलत्राणि बन्धो, बहु जन्म बन्धे इह जीव बन्धः ।

तं बंध छेदन्ति देवाधिदेवा, इह जन्मशरणं तव शान्तिनाथ ।।

9- जपस्तर्पोध्यानं भवति दुःखरि-वचनेन ।

श्री गुभद्रेण वाक्यं कंथितं तेन नरालभन्ते निर्वाणम् ।।

इति श्री गुणभद्र विरचितं शान्तिनाथ स्तवनं समाप्तम् ।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

24-चिन्तामणि-पार्श्वनाथ-स्तवनम्

1- नमद्दे-नागेन्द्र-मन्दारमाला-मरन्दच्छटाधौतपादारविन्दम् ।
परानन्दसन्दर्भलक्ष्मीसनाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

2- तमोराशि-वित्रासने वासरेशं हतक्लेशसंघं श्रिया सन्निवेशम् ।
क्रमालीन-पद्मावती-प्राणनाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

3- नवश्रीनिवासं नवाम्भोदनीलं यतानां शिवश्रीनिदाने सलीनम् ।
त्रिलोकीशपूज्यं त्रिलोकस्य नाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

4- हतव्याधिवेतालभूतादिदोषं कृताशेषभव्यावलीपुण्यपोषम् ।
मुखश्रीपराभूतदोषाधिनाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

5- नृपस्याश्वसेनस्य वंशावतंसं जनानां मनोमानसे राजहंसम् ।
प्रभावप्रभावाहिनीसिन्धुनाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

6- कलौ भाविनां कल्पवृक्षोपमानं जगत्पालने संततं सावधानम् ।
चिरं भेदपाटस्थिरं विश्वनाथं स्तुवे देवचिन्तामणिं पार्श्वनाथम् ।।

7- इति नागेन्द्र-नरामरवन्दितपादाम्बुजप्रवरतेजाः ।

देवकुलवाटकस्थः स जयति चिन्तामणिः पार्श्वनाथः ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

25- श्रीपार्श्वनाथस्तवनम्

1- ऊं ह्रीं ह्रैं शुभमन्त्रकैः प्रभुदिता यस्येह गर्भोत्सवे

मातुर्गर्भविशोधनाय मिलिता ह्रीमुख्यका देवताः ।।

मासान् पञ्चदशान् मुचन् धनपतिं दिव्यानि रत्नानि चों

द्रूं श्रूं क्षूं प्रमुखाक्षरैः पटुमतिः सो अव्याज्जिनो मां सदा ।।

2- निर्भायोन्नतवेदिकोदरगताः पूज्याः प्रपूज्यैर्नतं

स्थानार्घ्यप्रतिपत्य योगनिचितं देवेषु सर्वेषु च ।

यस्यैवाद्भुतकारिहारिहरिणा भक्तया च जन्मोत्सवे

ह्रीं श्रीमर्हमकारि दिव्यचरितैः भूयात्स नौ भूतये ।।

3- साम्राज्यं सकलं विमुच्य तृणवल्लोकामरैः संस्तुतः

कर्मारण्यविनाशिनीं सुखभृतां चिन्तामणिर्वापरम् ।

देवो अर्हन्मुनिसत्तमैर्नतपदेर्जग्राह दीक्षां च वः

सो अव्याद् भव्यसरोजबोधनकरो ग्लूं श्रीं श्रितो नो जिनः ।।

4- येना अअहत्य महारिमोहविभवं प्राप्तं परं केवलं

ज्ञानं यत्र विभासकं त्रिपथगं त्रैलोक्यनाथार्चितम् ।

ऐं ह्लीं श्रीं वरबुद्धिवैभवकरं भचीं क्ष्वीं श्रितं सो अस्तु नः

सर्वक्लेशविनाशनाय सततं बोधोच्छ्तः श्रीजिनः ।।

5- क्ष्म्ल्व्रू ग्लौं ग्लौं वरहः स यूं प्रणवकं ह्रां ह्रीं स ह्रूं ह्रैं सहः

हं सः सर्वकलात्मको जयवरो मोक्षे च यः संस्तुतः ।

देव श्रीहरिषेणपूर्ण विभवे असो देवचन्द्रं श्रुतः

सम्यक्त्वादिगुणावृतो गतमलो भूयाज्जिनो वः श्रिये ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

26- अथ निरञ्जनस्तोत्रम्

1- स्नानं न मन्त्रं न न नदविंदं, रूपं न रोषं न च वर्णवर्णम् ।

दृष्टं न न दृष्टं श्रुतं न श्रोतं, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

2- शवेतं न पीतं न च रक्तरेतं, हेमं न रुक्मं न च धातुवर्णम् ।

चन्द्रार्कवह्नि नोदये न अस्तं, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

3- वेदे न शस्त्रं स्मृतिनैव सन्ध्या, मन्त्रं न तन्त्रं न च ध्येयध्यानम् ।

होमं न जापं न च देवपूजा, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

4- वृक्षं न मूलं न च जीवकूरं शाखा न पत्रं न च वेल्लिपल्लम् ।

पुष्पं न गन्धं न फलं न छाया, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

5- ब्रह्माण्डखण्डम न च आवदण्डम कालो न जीवो न च पिण्डमण्डम्

ग्रहं न तारा न च मेघजालं, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

6- न पञ्चभूतं न च सप्तसागरं, दिशा न विदिशा न च स्वर्गमारम् ।

ब्रह्मा न इन्द्रो न च विष्णुरुद्रं, तस्मै नमो देव निरञ्जनाय ।।

7- क्षुधा न तृष्णा न भयं न दोषो रोगो न मोहाश्च न काम चिन्तम् ।

न जरा न रुजा च मृत्युश्च खेदः स्वेदो मदो नाप्यरतिः रतिश्र्च ।।

8- विस्मयं जननं निद्रा विषादो अष्टादशध्रुवम् ।

एतैर्दोषैर्विनिमुक्तिः सोअयमाप्तो निरञ्जनः ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

27- वीतराग-स्तवनम्

1- देवेन्द्रसेव्यं मुनिवृन्दवन्द्यं, देवेन्द्र-पूज्यं भुवनेन्द्रध्येयम् ।

त्रैलोक्यनाथं त्रिजगच्छरण्यं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

2- सर्वज्ञमेकं विगताभिमानं, श्रीदर्शनं केवलनाम-युक्तम् ।

सौख्याकरं वीर्यगुणं विशालं श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

3- सत्प्रातिहार्यातिशयं गरिष्ठं, सिंहासनस्थं समशत्रुमित्रम् ।

दिव्यध्वनिं पोषितभव्यलोकं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

4- शान्तस्वरूपं नयनोत्पलं च, श्रीदिप्तिमूर्तिं गतसर्वसंगम् ।

निरायुधं निर्भररत्नयुक्तं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

5- निर्भूषणं रागविकारदूरं, भव्यैकसीरं हतपापवीरम् ।

कर्मैकशत्रुं हतमोहपाशं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

6- श्रीमुक्तिनाथं भुवनैकसारं, जिनोत्तमं कीर्तिधरं महान्तम् ।

सदोदयं तारितसर्वलोकं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

7- विद्यामयं धर्मकरं विमारं, यतेन्द्रियं श्रीऋषि-नायकतम् ।

स्वयं गुरुं भूतपतिं विदोषं, श्रीवीतरागं प्रणमामि नित्यम् ।।

8- दिगम्बरं श्रीधरमव्ययं च, शतेन्द्रवंद्यं जगदेकतीर्थम् ।

अपारसंसार-समुद्रपोतं, निर्ग्रन्थनाथेन नुतं जिनेन्द्रम् ।।

9- अजरममरसेव्यं विश्वतत्त्वप्रदीपं, सकलभुवनपूज्यं सर्वदेवेन्द्रवंद्यम् ।

शमदमयमगेहं वीतरागं प्रपद्य विगतसकलशंको अहं गतो अस्मीव मुक्तिम् ।।

28- वीतराग-स्तोत्रम्

1- स्वात्मावबोधविशदं परमं पवित्रं, ज्ञानैकमूर्तिमनवद्यगुणैकपात्रम् ।

आस्वदिताक्षयसुखाब्जलसत्परागं, पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

2- उद्यत्तपस्तपनशोषितपापपंकं, चैतन्यचिह्नमचलं विमलं विशंकम् ।
देवेन्द्रवृन्दमहितं करुणालतांगं, पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

3- जाग्रद्धिशुद्धमहिमावधिमस्तशोकं धर्मोपदेशविधिबोधितभव्यलोकम् ।
आचारबन्धुरमतिं जनितासुरागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

4- कन्दर्पसर्पमदनाशनवैनतेयं पापापहारि जगदुत्तमनामध्येयम् ।
संसार-सिन्धुपरिमन्थनमन्दरागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

5- निर्वाणकम्रकमलारसिकं विदम्भं वर्धिष्णुसद्-व्रतचयामतपूर्णकुम्भम् ।
वल्गद्धिमोहतरुखण्डनचण्डनागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

6- ध्यानाग्निदग्धनिखिलोद्धतकर्मकक्ष-मानन्दकन्दमुररीकृतधर्मपक्षम् ।
व्यस्ताजवाजिगणघातविधायजागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

7- स्वच्छोच्छलदबलविनिर्जित मेघनादं स्याद्वादवादितममाकृततद्विषादम् ।
निःसीमसंयमसुधारससत्तडागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

8- सम्यक्प्रमाणकुमुदाकरपूर्णचन्द्रं मांगल्यकारणमनन्तगुणं वितन्द्रम् ।
इष्टप्रदानविधिपोषितभूमिभागं पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

9- श्री पद्मनन्दिरचितं किल वीतराग- स्तोत्रं पवित्रमनवद्यमनादिनादौ ।
यः कोमलेन वचसा विनयादधीते, पश्यन्ति पुण्यसहिता भुवि वीतरागम् ।।

इति श्री पद्मनन्दिरचित वीतराग स्तोत्रम् ।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

29- परमानन्दस्तोत्रम्

1- परमानन्दसंयुक्तं, निर्विकारं निरामयम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यस्थितम् ।।

2- अनन्तसुखसम्पन्नं ज्ञानामृतपयोधरम् ।
अनन्तवीर्यसम्पन्नं दर्शनं परमात्मनः ।।

3- निर्विकारं निराबाधं सर्व संगविवर्जितम् ।
परमानन्दसम्पन्नं शुद्धचैतन्यलक्षणम् ।।

4- उत्तमा स्वात्मनश्चिन्ता मोहचिन्ता च मध्यमा ।
अधमा कामचिन्ता स्यात्परचिन्ता अधमा अधमा ।।

5- निर्विकल्पसमुत्पन्नं ज्ञानमेव सुधारसम् ।
विवेकमञ्जलिं कृत्वा तं पबिन्ति तपस्विनः ।।

6- सदानन्दमयं जीवं यो जानाति स पण्डिता ।
तं सेवते निजात्मानं परमानन्दकारणम् ।।

7- नलिन्या च यथा नीरं भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।

अयमात्मा स्वभावेन देहे तिष्ठति निर्मलः ।।

8- द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं भावकर्मविवर्जितम् ।

नोकर्मरहितं विद्धि निश्चयेन चिदात्मनः ।।

9- आनन्दं ब्रह्मणो रूपं, निजदेहे व्यवस्थितम् ।

ध्यानहीना न पश्यन्ति जात्यन्धा इव भास्करम् ।।

10- सद्-ध्यानं क्रियते, भव्यैर्मनो येन विलीयते ।

तत्क्षणं पश्यते शुद्धं चिच्चमत्कारलक्षणम् ।।

11- ये धर्मशीला मुनयः प्रधानाः, ते दुःखहीना नियमाद् भवन्ति ।

सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्वं, व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेक एव ।।

12- आनन्दरूपं परमात्मतत्त्वं, समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तम् ।

स्वभावलीना निवसन्ति नित्यं, जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम् ।।

13- चिदानन्दमयं शुद्धं, निराकारं निरामयम् ।

अनन्तसुखसम्पन्नं, सर्वसंगविवर्जितम् ।।

14- लोकमात्रप्रमाणो अहं, निश्चये न हि संशयः ।

व्यवहारे देहमात्रो अपि, कथितं परमेश्वरैः ।।

15- यत्क्षणं पश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गतविभ्रमः ।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्वा, निर्विकल्पसमाधिना ।।

16- स एव परमब्रह्म, स एव जिनपुंगवः ।
स एव परमं तत्वं, स एव परमो गुरुः ।।

17- स एव परमज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव पदमात्मनः ।।

18- स एव सर्वकल्याणं, स एव सुखभाजनम् ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमः शिवः ।।

19- स एव परमानन्दः, स एव सुखदायकः ।
स एव परं चैतन्यं, स एव गुणसागरः ।।

20- परमाह्लदसम्पन्नं, राग-द्वेष-विवर्जितम् ।
स्वदेहे स्थितमात्मानं, यो जानाति स पण्डितः ।।

21- आकार रहितं शुद्धं, स्वस्वरूपे व्यवस्थितम् ।
सिद्धस्याष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरञ्जनम् ।।

22- तत्सदृशं निजात्मानं, यो जानाति स पण्डितः ।
सहजानन्दचैतन्यं, प्रकाशाय महीयसे ।।

23- पाषाणेषु यथा हेमं, दुग्धमध्ये यथा घृतम् ।

तिलमध्ये यथा तेलं, देहमध्ये तथा शिवः ।।

24- काष्ठमध्ये यथा वह्निः, शक्तिरूपेण तिष्ठति ।

अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

30- भावनापद्धति- अपरनाम चतुस्त्रिंशिका स्तोत्रम्

1- शुद्धप्रकाशमहिमास्तसमस्तमोह-निद्रातिरेकमसमावगमस्वभावम् ।

आनन्दकन्दमुदयास्तदशानभिज्ञं स्वायम्भुवं भवतु धाम सतां शिवाय ।।

2- श्री गौतमप्रभृतये अपि विभोर्महिम्नः प्रायः क्षमा न यतयः स्तवनं विघातुम् ।

इत्थं विचार्य जहतस्तदमुत्र लोके सौख्याप्तये जिन भविष्यति मे किमन्यत् ।।

3- राका- शशांकमह तां भवतो गुणानां को वक्तुमीश निपुणो महतामियत्ताम् ।

को वा प्रभुर्गणयितुं गगने अत्र ताराः संवर्षतां जलमुचाममिताश्च धाराः ।।

4- सावद्यमेतदथवा निरवद्यमीश स्तोत्रं त्वदीयममतेर्गदतो ममापि ।

मोक्षो न चेत्तदपि देवपदं ध्रुवं स्याद्धीनो अपि हेमगिरिमाप्यलभेत किञ्चित् ।।

5- आनन्दरूप भगवन् भवतां स्महेकी भावं जिनानुभवतीह तमांस्यपास्य ।

यद्युद्धताद्भुतविवेककलः किलात्मा तन्नास्य कर्मभिरुदेति कदापि बन्धः ।।

6- सद्दर्शनावगमवृत्तमयो य व मार्गो निसर्गविशदः सुखदो विमुक्तेः ।

तस्मै यथा मम मनः स्पृहत्यजस्त्रं तस्मिन् हिते विहरतीश तथा कुरुष्व ।।

7- अद्यैव मानस-मराल-जिनेश सेवा देवा अअपगाम्भसि रमस्व मनस्विमान्ये ।

याते अथवा विधिवशाद्दिवसावसाने कीनाश-पाश-पतितस्य कुतो रतिस्ते ।।

8- कर्मोर्वरा-पटल-संपिहितं परात्मज्योतिर्निधं जिन तव स्तव-सत्खनित्रैः ।

उत्खाय हस्तगतमाशु यथा करोमि करुण्यसागर मयीश तथा प्रसीद ।।

9- रूपं चिदात्मकमदः स्मरतः स्मरारे नामाभ्द्भुतं च जपतो भवतो भदन्त ।

उच्चैर्गुणान् श्रुतिपथं नयतो नयाब्धे कालो अयमेतु मम निर्मम सत्कृपालो ।।

10- अट्राक्षमक्षयसुखामृतकुण्डचण्डं पाखण्ड-खण्डन यदंह्रियुगं त्वदीयम् ।

अन्धोरुकूपसदृशे तदहं जनन्या गर्भे अर्भकत्वमशुचौ न पुनः स्पृशामि ।।

11- ग्रावादि-निर्मित-शुभप्रतिमासु यस्त्वां ध्यायत्यमर्त्यपतितामुपयाति सो अज्ञः ।

ज्ञानात्मकं तु भजतां भवतः स्वरूपं कीद्दक् कियत् फलमलं तदहं न जाने ।।

12- सर्वेषु देवनिचयेषु जगत्रये अस्मिन् लोकोत्तमः सकलविज्जिन एव देवः ।

नान्यः किलेति सुविचारपरं मनो मे स्थातुं त्वयीच्छति चिदात्मनि निर्विकारे ।।

13- देवेषु भूरिषु हरिप्रमुखेषु सत्सु व्यापत्सरः स्वति जनान् पततो विमोहात् ।
उद्धर्तुमत्र जिन एव विभुर्न चान्यो मत्वेति वाञ्छति मनो भवदंह्रिसेवाम् ।।

14- शम्पेव सम्पदबला चपला घनाली लोलं वपुः सुत-सुहृत्कनकादि सर्वम् ।
ज्ञात्वेति सोअहमहमिन्द्रशतस्तुताह्रे लीये मुदा त्वयि सनातन-चित्स्वभावे ।।

15- आतंक-शोक-मरणोद्भव तुंगशैला अअरोहवरोहकरणैर्मम पीडितस्य ।
दुर्वार-ताप-हतये भवतज्जिनेश, युषद्वचः-शुचि-सुधा-सरसी-प्रवेशः ।।

16- लोके अखिले अहुरुरागसमन्वितेन संभ्रामितो अनुभवितुं बहुदुःखजालम् ।
एतेन देव मनसा भ्रमता तदेतद्बद्वाञ्जलि निजगेर्नय निशचलतवम् ।।

17- देवस्त्वमेव भगवन्तहमित्यकम्पा त्वां ध्यायतः समभवन्मम या सुबुद्धिः ।
संसार-सागर-तरीमिह तां विनिघ्नन् संवार्यतामरमरातिरयं विमोहः ।।

18- याभ्यामहं जगति जन्मनि जन्मनीह क्षिप्तः पुनः पुनरगाध-भवाब्धिमध्ये ।
एतौ च तौ जिन निवारय राग-रोषौ यस्मान्निवारणविधावनयोस्त्वीशः ।।

19- केनपि नौ सुभटकोटिषु निर्जितो अयं कमो अजितो जिनपते भवतेति मत्वा ।
एतावदद्भुतमतो अहमिहार्थये त्वां मां तापयन्तमकृपं जहि पापमेनम् ।।

20- रे पाप-लोभ मम चित्त-गृहे प्रवेशं स्वप्ने अपि मा कुरु हठातच्छठ वरितो असि ।
निर्लोभितादभुतगदां स्वयमादधानस्तस्मिन् जिनस्तवयतो हननार्थमास्ते ।।

21- कोपाद्वधः सकलदेहषु तेन नूनं श्वाभ्री गतिर्भवति दुःख-परम्परा स्याम् ।
मत्तस्ततो जिनपते गलके गृहीत्वा निस्सारय द्रुतममुं विपदां निदानम् ।।

22- एकेन्द्रिय-प्रमुख-जीवगणे प्रमादाद्वाधाभिरुज्झितदयेन मया कृताभिः ।
पापं यदर्जितमनेकविधं जिनेन्द्र मिथ्या तदस्तु चरणाद्भुतभक्तितस्ते ।।

23- कायादितः पृथगिहास्ति न कश्चिदात्मा देवो न कोअपि न गुरुर्न दया न धर्मः ।
लोकःपरोअपि न विभो बहुधेत्यविद्या अअवेशाद्यदर्जि दुरितं विफलं तदस्तु ।।

24- मोहोदयेन मदन-ज्वलनावलीढो यत्कर्म दुष्करमकार्षमृषिस्तुतांह्रे ।
तत्वत्प्रसादवशतो निखिलं निरस्य निष्कर्मणि त्वयि परात्मनि देव वर्त्ते ।।

25- कायेन देव वचसा मनसा स्वयं यत् पापं परे रहमकार्षमचीकरं च ।
अन्यैः कृतं मुदमगामनुमन्यमानो मिथ्या अस्तु मे तदखिलं भवतः प्रसादात् ।।

26- क्लेशाकुलेषु करुणा विपरीतवृत्तौ माध्यस्थमंगिनिचये परमा च मैत्री ।
विद्वत्सु शील-कलितेषु सदा प्रमोदः संपद्यतां भवविपच्छमनैकहेतोः ।।

27- स्त्रैणे तृणे सुहृदि वैरिणि निन्द्यकाचे सत्काञ्चने अश्मनिचये कुसुमोच्चये च ।
दुःखे सुखे समद्दशो जपतो ममात्र लोके प्रभो जिन जिनेति दिनानि यान्तु ।।

28- मार्गे त्वद्गदिते सदा विहरतस्त्वां तत्वत्तो ध्यायत
स्त्वद्वाक्यामृतमद्भुतं च पठतस्त्वत्सद्गुणान् श्रृण्वतः ।
त्वद्धृत्तं स्तुवतस्त्वदंह्रिकमलद्धन्द्वार्चनं कुर्वतः
कालोअयं विजने वने निवसतो मे यातु लोकप्रभो ।।

29- मृत्युः क्रीडति दुर्द्धरो हरिरितो जन्म स्फुरच्छूकरः
प्रायो भीषयते जरा विचरति व्याघ्री त्वितो दुर्मुखी ।
संसारो वनमत्र को निपतितः प्राणी सुखी स्यादिति
त्वां सोअहं शरणं गतः शरणद त्वं रक्ष रक्ष प्रभो ।।

30- सत्याभृतोद्वारि वचो दया अअर्द्रचित्तं चिदानन्द परं सदैव ।
मतिर्जिनेन्द्रागमकोविदा च भवत्प्रसादाद् भगवन्ममाअस्तु ।।

31- नो पाकशासनमहासनलब्धिमब्धिनीराम्बरामपि धरां भगवन्त याचे ।
याचे समाधिमरणं परिणाम शुद्धिमात्मानुभूतिमधिकां सकृपापवर्गम् ।।

32- रत्नत्रयप्राप्तिमथात्मशुद्धिमत्यद्भुतां मुक्तिपुरीसमृद्धिम् ।
देहि द्रतं मोहतरुं लुनीहि समाधिमाधेहि मयीश दीने ।।

33- यद् व्यञ्जन-स्वर-विसर्ग-सदर्थमुक्तं मात्राक्षर च्युतमलं पद-वाक्यहीनम् ।
सत्सन्धिवर्जितमपाठि मया प्रमादाद् वाणि क्षमस्व तदिह स्खलितं मदीयम् ।।

34- श्रीमत्प्रभेन्दुप्रभुवाक्यरश्मि विकासि चेतः कुमुदः प्रमोदात् ।

श्रीभावनापद्धतिमात्मशुद्ध यै श्रीपद्मनन्दी रचयाञ्चकार ।।

इति श्री पद्मनन्दी विरचित भावनापद्धतिः समाप्ता ।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

31- श्री वैराग्य मणिमाला

1- आनन्द-चिन्मय-सुधारस-पान-तृप्तः शुद्धोपयोगमहिमानमुपागतश्च ।

कैवल्यबोध-भरिताद्भुत-धाम-धन्यः पायात्पवित्रित-जगत्परमात्मराजः ।।

2- चिद्रूपामृतवाहिनीपरिलसत्कैवल्यसत्कैरवं,

शुद्धध्यानमरन्दबिन्दुलहरी-लीलालसत्कर्णिकम् ।

सत्सम्यक्त्व-मृणालमण्डितवपुचारित्रनालान्चितं,

योगीन्द्र-भ्रमरौघसेवितमिदं पायादपायात्सदा ।।

3- ज्योतिश्चिनमयकौमुदी-प्रणयिनी सद्द्दष्टिरुज्जृम्भते

शुद्धध्यान-सुधासरित्प्रविलसत्यानन्दसंदायिनी ।

चारित्रामृतवार्धिवीचिपटली संवर्धते मेदिनी

चिद्रूपामृतदीधितेरुदयतो योगीन्द्र पूर्वाचले ।।

4- भेदज्ञान सुधासरित्प्रणयिनीं संवर्धयन् सर्वदा

चिद्रूपामृतचन्द्रिकां दिशि दिशि प्रोल्लासयन्तञ्जसा ।

योगीन्द्राद्भुत-बोधि-कैरवलतां प्रोत्फुल्लयन्नादरा-
च्छुद्धानन्तचतुष्टयामृतनिधिः प्रोज्जृमभते पार्वणः ।।

5- ज्योतिश्चिन्मयबोधि कैरवलतामुल्लासिनीं कुर्वता
चैतन्यामृत-तेजसा विदधता मुक्त्या अअपगामज्जसा ।
कैवल्यामृतवार्धिवर्धनविधिं सन्धित्सरा सर्वदा
शुद्धध्यानमहीधरे विजयते चिद्रूप-चन्द्रोदयः ।।

6- पायं पायमुपायभावरहितां चैतन्यरूपां सुधां
नायं नायमनन्तशान्तिपदवीं चित्ते-स्थिरं सर्वदा ।
ध्यायं ध्यायमलंघ्यबोध विशदं चिद्रूपमत्यद्भुतं
योगिन् योगविलासरञ्जितधिया साम्यं समालम्बय ।।

7- याद्दग् निर्मलमूर्तिरेष वसति स्वात्मोपलब्धौ सदा
नित्यानन्द-विशुद्ध-चिन्मयवपुर्देहे अपि ताद्दग्विधः ।
भेदं मा कुरु भद्र चित्तकमले सूक्ष्मेक्षया अअलोकय
प्राप्तानन्तचतुष्टयामृतनिधिं स्वं शुद्धमत्यद्भुतम् ।।

8- रे चित्त किं भ्रमसि भूरिविकल्पजाले कार्यं कियत्तव समस्ति भवान्धकूपे ।
किं खिद्यसे विविध-मानस-जात-दुःखैश्चिद्रूपमन्वहमुपैहि सुखामृताय ।।

9- जीव त्वमेहि निजमन्दिरयोग्यवासं किं खिद्यसे परगृहे स्वनिवासशून्यम् ।
किं ताम्यसि त्वमनिशं पर-वाससक्तश्चिद्रूपमावस निजोत्तमधाम रम्यम् ।।

10- स्वप्ने अपि नोपशमतामुपयासि मूढ भ्रान्त्वा जवञ्जववने बत मोहभावात् ।

भो मित्र मोहमवमुञ्च भजस्व शान्तिं शुद्धोपयोगमुपयाहि कुरु स्वकार्यम् ।।

11- भ्रातः किं कुशलं त्वास्ति सततं संसारघोरार्णवे श्वभ्राअशात करालवाडवलसद्धमध्वजे मज्जतः ।

कालक्रूरमहातिमिंगिलगिल क्रंकारघोरीकृते भेदज्ञानविशिष्टबोधमचिरादालम्ब्य तीरं व्रज ।।

12- संसारे भ्रमता त्वया अतिसुचिरं किं साधितं ब्रूहि मे

मुढाद्यापि विशिष्टबोधनिलयो दुःखार्णवान्तोद्धृतः ।

भोगक्रूर भुजंवक्रकुहरे स्थातुं पुनर्वाञ्छसि

शुद्धध्यानसुधाम्बुधौन रमसे संसार-दुःखापहे ।।

13- कामोन्माद-महाभुजंगभयदे मिथ्यात्वमोहोदके

क्रोधाद्युग्रतिमिव्रजप्रवितते तृष्णान्धकूपे चिरम् ।

किं मग्नो असि सखे समस्तभुवनं यत्राणुमात्रोपमं

तस्मान्तिर्गमनं समस्ति न पुनः सन्तोषयन्त्रं विना ।।

14- अनादौ संसारे चिरपरिचितं विश्वमखिलं त्वया धीमन् मोहोदयपरत्या ना अअत्मचरितम् ।

वदामः किं भ्रातस्तव निपुणबुद्धेर्निपुणतां चिदानन्दात्मानं परममपहायात्र रमसे ।।

15- अन्तस्ताप-विजृम्भणेन सततं कामोद्भवेनाधुना

नो जानासिहिताहितं जडमते तत्रैव सक्तोअसिकिम् ।

अन्तः शान्तिमुपैहि मुञ्च जडतां संभावय स्वात्मतां
नित्यं चेतसि चिन्मयप्रविमलं चिद्रूपमेकं परम् ।।

16- हं हो चित्त विशालसंसृठिवने तृष्णादवाग्न्युत्कटे
काम-क्रोधकरालकेसरिकुले मूर्च्छामदाष्टापदे ।
क्रूरस्फारफणालकोलभुजगे मृत्विन्धकूपाकुले
भ्रान्त्वा तत्र चिरं तवास्ति कुशलं किं भेदबोधं विना ।।

17- सर्वत्राशुचिसप्तधातुकलिते बद्धे स्नसाजालकै-
बीर्भत्सान्त्रसमाकुले कृमिकुलाकीर्णे त्रिदोषाविले ।
कालक्रूर- विडालकपोतभयदे देहावहे पंजरे
संसक्तो अथ कथं शुक व्रज सखे चैतन्यचूतद्रमम् ।।

18- हं हो भव्यशिरोमणे भ्रमसि किं संसारकान्तारके
हित्वा बोधविशिष्ट रत्नममलं सर्वार्थ संसाधकम् ।
कामादिप्रभवां प्रपीय मदिरां मोहाभिधा मा पुन-
स्तत्पानं कुरु जातुचिद् गुणनिधे मोक्षाभिलाषो अस्ति चेत् ।।

19- भ्रातस्तत्त्वकुतूहली किल भवान् सर्वाणि तत्वान्यहो
संभुक्तानि सदा त्वयैकपरमं चिद्रूपतत्त्वं विना ।
चिद्रपामृतसेवने कुरु रतिं सौख्याभिलाषा अस्ति चे-
ल्लोके नूतनतत्त्वसंगतिरतिं बन्धाति कौतूहली ।।

20- हंहो हंस, विवेकता तव भुवि प्रख्यातिमुल्लासिनी
वैशद्यं सकलातिशायि भुवने वस्त्वन्तरे दुर्लुभम् ।
चातुर्य चतुराननस्य भवतो भो भिन्न, किं ब्रूमहे
शुद्धं चिन्मयमानसं शिवपदं हित्वा वृथा मुह्मसे ।।

21- हं हो चित्त-भ्रमर, भवता भ्राम्यता भ्रान्तिभावाद्
भोगासक्त्या भववनभवद्भूरि-तृष्णालतासु ।
तासूद्गच्छद्विषम विषय-प्रीतिपुष्पव्रजेषु
नीत्वा कालं चिरमनुषधिः श्वभ्रदुःखं प्रपेदे ।।

22- श्रान्तो असि संसृतिवने परितो भ्रमेण
भो मित्र मोहवशतो विषयानुषंगात् ।
श्वभ्रादि दुःखमनुभूतमनन्तवारं
निःश्रेयसाय समुपैहि समाधिभावम् ।।

23- प्रोत्तुंगाचलमस्तके वनलता-कुञ्जोदरे गह्वरे
नद्यास्तीरसमस्थले घनवने स्थित्वा समाधौ रतः ।
चिन्मुद्रांकित-शुद्धभाव-विलसत्कैवल्यबोधोदयः
संजातो अस्मि यदा तदा शमनिधिर्धन्यो अस्मि धन्यात्मनाम् ।।

24- मूलं शुद्धोपयोगः परमसमरसीभावदद्दक्कन्धबन्धः
शाखा सम्यक्चरित्रं प्रस्रमर विलसत्पल्लवा क्षान्तिभावाः ।
छाया शान्तिः समन्तात्सुरभितकुसुमः श्री चिदानन्दलीला

भूयात्तापोपशान्त्यै शिवसुखफलिनः संश्रयो अगो अङ्गिगम्यः ।।

25- सिद्धिः श्रीसंगसौख्यामृतरसभरितः सच्चिदानन्दरूपः
प्राप्तः पारं भवाव्धेर्गुणमणिनिकरोद्भूरिरत्नाकरोअपि ।
चैतन्योल्लासिलीलासमयमुपगतः शान्तसम्पूर्णशर्मा
योगीन्द्रै र्व्योधिलब्धौ परमसमरसीभावगम्यः सुरम्यः ।।

26- चिन्मयभावरूप-चिद्रप-सुधारस-पूर्ण-द्दड्मयं
केवलबोध-विशद-सुर-सिन्धु-वलासविजृम्भणोदयम्
परमानन्दचन्द्र-किरणोज्ज्वलशान्तरसौघघन-चन्द्रिकं
भावय भव्य चित्त-कौमुद-वदन-बोधकरं चिदात्मकम् ।।

27- समयसार-सुधारस-वाहिनी समयसार-सुधाकर-कौमुदी ।
समयसार-सुरद्रम-मञ्जरी विजयते जिनराज-समाकृतिः ।।

28- स्वच्छन्दं नवशल्लकीकवलनं पम्पासरो मज्जनं,
रेवाशोणविगाहनं वनलताकुञ्जोदरे क्रीडनम्
सानन्दं गजयूथपेन गमनं मात्रा करिण्या समं
ध्यायेद्वालगजो यथा जिनपदद्वन्द्वं तथा मानसे ।।

29- जन्मनि जन्मनि जिनवर रमतात्त्वत्पाद अपद्ययुगले अस्मिन् ।
भक्तिभ्रमरीनिभृतं चिद्रपामोद-बोध-किञ्जल्के ।।

30- श्रीमद्देवेन्द्रकीर्त्तिप्रभुगणमहितः स्वामिविद्यादिनन्दो

धीमान् श्रीपूज्यपादो गुणनिधिरुदयप्राप्तकैवल्यबोधः ।

मुक्तिश्रीसौख्यसम्पत्प्रवरगुणगणोल्लासिरत्नत्रयात्मा

जीयात्तीर्थेश्वरो अयं जिनपतिरखिलं शास्ति नित्यं सेनो अव्यात् ।।

31- वैराग्यमणिमालेयं रचिता सदलंकृतिः ।

विशालकीर्त्तियतिना विद्यानन्दोदयाअर्थिना।।

इति श्री विशालकीर्त्ति यति रचिता वैराग्यमणिमाला समाप्ता ।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

32- पञ्चाक्षरमयी-देवताराधनाष्टकम्

1- या योगीन्द्र-नरेन्द्र वृन्द-महिता मोक्षस्य निःश्रेणिका

स्वर्गारोहणमिच्छतां तनुभृतां सोपानमालोपमा ।

या अनर्घ्या भुवनत्रयस्य विमला या मुक्तिसौख्यावहा

वन्दे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

2- या निर्वाण विशिष्टसौख्यजननी स्वर्गार्गलोद्धाटिनी

संसारार्णवशोषिणी शिवकरी कर्माष्टकोच्चाटिनी ।

या विघ्नान्तक-रोग-शोक-मथनी या कामधेनु परा

वन्दे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

3- स्वात्मीयात्मतया परा शिवतया स्वात्मोत्थिता स्वात्मना

भक्त्या बोधि-समाधि-मुक्तिकुशला दारिद्यनिर्नाशिनी ।

या शुद्धात्मनि संस्थिता च महती स्वात्मीयबोधोद्भवा

वन्दे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

4- या सम्यक्त्वमहार्चरत्नजननी ज्ञानोदभवा या परा

शुद्धा धर्ममयी स्वसिद्धिविषया तुर्यास्तपो निर्मिता ।

या दत्ते पदमक्षयं शुभधियां कल्याणमाला परा

वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

5- या दत्ते च जिनेशिनां पदमजं त्रैलोक्यसंक्षोभकं

स्थानं जन्म-जरा-वियोगरहितं ज्ञानं परं निर्मलम् ।

सौख्यं सर्वसुरासुरेन्द्रमहितं लोकान्तिकानां पदं

वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

6- स्वात्मन्या परमात्मना बहुविधा स्वात्मीकृता स्वात्मना

स्वात्मानं परमात्मना निरुपमा या ध्यायते योगिभिः ।

भव्या स्वात्मनि संस्थिता यतिनुता संग्हय ज्ञानात्मना

वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

7- या मूलं सकलागमस्य सकलज्ञानस्य या कारणं

शुभ्रा बालमृणालकान्तिसद्दशी ज्ञानोद्भवा भास्करा ।

ध्येया सर्वनरामरेन्द्रनिवहैश्चित्तैनसां ध्वंसिका

वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

8- या अभच्र्या मलवर्जिता शुभकरी तापत्रयोन्मूलिनी
हृष्टा कुष्टविनाशिनी हितकरी मातेव शर्मप्रदा ।
या लोकाग्रनिवासिनी शिवमयं दत्ते पदं शाश्वतं
वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

9- या कर्मारिविनाशिनी जिनमता या मंगला योगिनां
या सर्वासु मनोहरा गणधरैराराध्यमाना सदा ।
वै बुद्धा स्वयमात्मनो भयहरी या स्वेन स्वात्मीकृता
वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

10- तावद्दुर्गतिदुःखभारभरितः प्राणी चिरं विद्यते
नानादुःखभराकुले बहुतरं दुःखं भवे सह्यते ।
यावन्नौति न देवतां गुरुनुतां भो श्रीमहाराधनां
वंदे अहं त्रिविधेन तां भगवतीं स्वाराधनादेवताम् ।।

11- धन्यास्ते धरणीतले अपि मनुजास्ते योगिनो ज्ञानिन-
स्ते ज्ञानोदधिपारगास्त्रिभुवने ते पुण्यवन्तो नराः ।
ते संसारसमुद्रशोषणपरास्ते भाजनं सम्पदां
ये ध्यायन्ति दिवानिशं भुवि नुतां स्वाराधनादेवताम् ।।

12- आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधतीं मुक्तिश्रियो वश्यता-

मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभवां विद्वेषमात्मैनसाम् ।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रतिहतं मोहस्य सम्मोहिनीं
वन्दे पञ्चनमस्क्रियाक्षरमयीं स्वाराधनादेवताम् ।।
(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

33- अनादिनिधनस्तवनम्

1- अनादिनिधने नाथ संसारे दुःखसागरे ।
चञ्चले विषमे भीमे, अगाधे पारवर्जिते ।।

2- जन्म-मृत्यु-जरा-तोये तृष्णा-मकर-संकुले ।
अज्ञान-सिकता अअकीर्णे माया-दोष-तरंगके ।।

3- क्रोध-मान-भयावर्ते चिन्तावातेन क्षोभिते ।
काम-राग-सिता-फेन-रति-दोषभयानके ।।

4- माया-मोह-बृहन्मीने लोभस्थ-बडवानले ।
दुर्गति-नाम-वेलायां वृद्धिर्याति सुविस्तरम् ।।

5- एवम्भूते महाभीमे संसारे दुःखसंकटे ।
भ्राम्यमाणो जग-च्चक्रे प्राप्तं दुःख निरन्तरम् ।।

6- नारकाणां महदुःखं तिरश्चां च महद्भयम् ।

देवानां मानसं दुःखं मनुष्याणां वियोगजम् ।।

7- एतैश्च विविधाकारैः दुःखजालैः पुनः पुनः ।

आवृतो अहं जगत्स्वामिन् तस्मिन् तस्मिन् भवान्तरे ।।

8- काममोहवशो भूत्वा पुत्र-दारैस्तु कारणैः ।

कृतानि बहुपापानि अज्ञानतमसावृता ।।

9- प्राणा निपीडिताः पूर्व मृषावचनभाषितम् ।

हृतानि पर-द्रव्याणि पर-दारा सुसेविता ।।

10- मद्यं मासं तथा अन्यैश्च बह्वा अअरम्भ-परिग्रहैः ।

लुब्धबुद्धया मया नाथ कृतं कर्म सुदारुणम् ।।

11- तेन पापेन संवेष्ट य बहुशो बहुजन्मनि ।

प्राप्तं दुःखं मया नाथ त्वां नाथ शरणं गतः ।।

12- संसार-दुःख-संत्रस्त-आगतो अस्मि, महामुने ।

नान्यच्छरणमस्तीति मया ज्ञातं सुनिश्चितम् ।।

13- त्वं त्राता भव-भीरुणां प्राणीनां दुःख-भागिनाम् ।

दाता स्वर्गापवर्गस्य त्वमेकः परमो गुरुः ।।

14- दया-सत्त्वादिसंयुक्तः सद्धर्मः परमं श्रुतम् ।

कथितं सिंहनादे-(न) त्वमेकः परमोदयः ।।

15- त्वमेव भगवन् स्वामी त्वं माता त्वं पितामहः ।

त्वञ्च बन्धुरबन्धूनां त्वमेकः पुरुषोत्तमः ।।

16- ब्रह्मस्थाने स्थितो यस्मात् स ब्रह्म परिगीयते ।

विष्णुत्वं च त्वया प्राप्तं व्याप्तं ज्ञानार्करश्मिभिः ।।

17- रुद्रस्त्वं रौद्रकर्माणि (दग्धवा) स्वध्यान वह्निना ।

दिव्यैश्वर्यसमायुक्त ईश्वरत्वमुपागतः ।।

18- दातासुखस्य भूतेभ्यः शंकरत्वं प्रतिष्ठतम् ।

महाव्रतोपदेशेन महादेवोपगम्यते ।।

19- प्रजानां हितदेशित्वात्त्वं देव प्रजापतिः ।

महामोहाभिभूतानां बोधनादबुद्धतां गतः ।।

20- त्रैलोक्यलोचन (ज्ञानात्) त्वं च स्वामी त्रिलोचनः ।

हिरण्यगर्भतां प्राप्तो वसुधाराप्रपातनात् ।।

21- श्रिया परभया युक्तः श्रीधरत्वमुपागतः ।

अनन्तो विश्रुतैर्देवेरनेको भवमन्तरे ।।

22- महापूजां यतः प्राप्तो अहर्तां नामतां गतः ।

महामोहरिपुं त्वा तेन त्वं जिनतां गतः ।।

23- नमस्ते दोष निर्मुक्त प्रजानां हितदेशक ।

समाधिं बोधिलाभं च वरं देहि जगत्प्रभो ।।

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

34- सरस्वती स्तवनम्

1- अविरलशब्दधनौघप्रक्षालितसकलभूतलमलकलंका ।

मुनिभिरूपासिततीर्था सरस्वती हरतु दुरितं नः ।।

2- ऊं ह्रीं श्रीं मन्त्ररूपे विबुधजननुते देवि देवेन्द्रवन्द्ये,

चन्चच्चन्द्रावदाते क्षपितकलिमले हार-नीहारगौरे ।

भीमे भीमाट्टहासे भवभयहरणे भैरवी भीरू धीरे,

ह्रां ह्रीं ह्रूंकारनादे मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

3- ह्रौं ह्रः क्षवीं बीजगर्भे सुरवररमणीचर्चिता अनेकरूपे

को पं वं झं धियेव धरित-व्रतधरे योगिनी-योगगर्भे ।

हंस सं सः स्वर्गजेश्च प्रतिदिननमते प्रस्तुतालापपीठे ।

दैत्येन्द्रैर्ध्यायने मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

4- दैत्यैर्दैत्यारिणाद्यैर्नमितपदयुगे भक्ति हृष्टै स्त्रिसन्ध्यं

यक्षैः सिद्धैश्च नम्रैरहमहमिकया देहि कान्ते सुकान्ते ।

आ ई ऊ ई ते अ आ आ मृदु मृदुरे सस्वरे अन्ये स्वरेण्ये-

त्येवं प्रोहीयमाने मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

5- क्षां क्षीं क्षूं क्षः स्वरूपे हन विषमविषं स्थावरं जंगमं वा,

संसारे संश्रितानां तव चरणयुगे सर्वकालं नराणाम् ।

अव्यक्ते व्यक्तरूपे प्रणुतनरवरे ब्रह्रूपे स्वरूपे

ऐं क्लीं ब्लूं योगिगम्ये मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

6- सम्पूर्णे विज्ञशोभे शशधरधवलादास्यबिम्बात्प्रसूते,

रम्यैः स्वच्छैः स्वकान्तैर्द्विजकरनिकरैश्चन्द्रिकाकारभासैः ।

अस्माकीनं भवार्य दिनमनुसततं कल्मषं क्षालयन्ती,

श्रां श्रीं श्रूं मन्त्ररूपे मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

7- भीष्मे पद्मासनस्थे जिनमुखनिसृते पद्महस्ते प्रशस्ते,

प्रां प्रीं प्रूं प्रः पवित्रे हरेहर दुरितं दुष्टजं दुष्टचेष्टाम् ।।

वाचां लंभाय भक्त्या त्रिदिवयुवतिभिः प्रत्यहं पूज्यपादे ।

चण्डे चण्डी कराले मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

8- नम्रीभूतक्षितीशे प्रवरमणिमुकुटे घृष्टपादारविन्दे,

पद्मास्यै पद्मनेत्रे जगत्रितयगमने हंसयाने प्रमाणे ।

कीर्तिश्रीबुद्धिचक्रे जयविजयजये गौरि गोधारियुक्ते,

ध्येये धेयः शरण्ये मम मनसि सदा शारदे तिष्ठ देवि ।।

9- विध्यन् ज्वालां प्रदीप्तां प्रवरमणिमयामक्षमालां कराग्रे,

रम्यां वृक्षां धरित्रीं दिनमनुसततं मन्त्रकं शारदां च ।

नागेन्द्रैरिन्द्रचन्द्रैर्मनुजमुनिजनैः संस्तुता या च देवी,

कल्याणं सा च दिव्यं दिशतु मम सदा निर्मलं ज्ञानरत्नम् ।।

10- कार्त्तस्वर-सद्दशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादतः कवयः ।

पश्यन्ति सूक्षममतयः सा जयतु सरस्वती देवी ।

इति श्री पूजयपाद स्वामि विरचितं सरस्वती स्तोत्रम्

(ऐ0 प0 दि0 जैन सरस्वती भवन के गुटके से)

35- भारती स्तुतिः

1- कलभराल-विहंगमवाहना, सितदुकूल-विभूषणभूषिता ।

प्रणतभूमिरुहा अमृतधारणी, प्रवरदेहविभाभरधारिणी ।।

2- अमृतपूर्णकमंडलुधारणी, त्रिदशदानवमानवसेविता ।

भगवतीपरमैव सरस्वती, मम पुनातु सदा बदनाम्बुजम् ।।

3- जिनपतिप्रथिता अखिलवाङ्मयी गणधरानन-मंडपनर्तकी ।

गुरुमुखाम्बुजखेलन-हंसिका, विजयते जगति श्रुतदेवता ।।

4- अमृतदीधिति-बिम्बसमाननां, त्रिजगती-जननिर्मितमाननाम् ।
नवरसामृतवीचि सरस्वतीं, प्रभुदितः प्रणमामि सरस्वतीम् ।।

5- विततकेतकपत्रविलोचने, विहितसंश्रितदुष्कृतमोचने ।
धवलपक्षविहंगमलाञ्छिते, जय सरस्वती पूरित वाञ्छिते ।।

6– भवदनुग्रह लेशतरंगितास्तदुचितं प्रवदन्ति विपश्चितः ।
नृपसभासु यतः कमला बलात्कुचकलाकलनानि वितन्वते ।।

7- गतधना अपि हि त्वदनुग्रहात्कलितकोमलवाक्यसुधोर्मयः ।
चकितबालकुरंगविलोचने, जनमनांसिहरन्ति तरां नृणाम् ।।

8- करसरोरुहखेलनचञ्चला, तब विभाति वरा जयमालिका ।
क्षुतपयोनिधिमध्यविकस्वरोज्ज्वल तरंग कलाग्रहसाग्रहा ।।

9- द्विरदकेसरिमारिभुजंगमा सहन तस्करराजरूजां भयम् ।
तव गुणावलिगानतरंगिणां, न भविनां भवतिश्रुतदेवते ।।

10- ऊं ह्रीं क्कीं ब्लूं ततः श्रीं तदनु हं सकल ह्रीं ओमथो ऐं नमो ते,
लक्षं साक्षाज्जपति यः करसमविधिना सत्वतो ब्रह्मचारी ।
निर्यान्तीं चन्द्रविम्बात्कलयति मनसा त्वां जगच्चन्द्रिकाभां
सो अत्यर्धं ब्रह्मकुण्डे विहित-घृतहुतिः स्यादशांशेन विद्वान् ।।

शान्तिनाथाष्टक

(पं0 हीरा लाल जैन सिद्धान्त शास्त्री) **(13-03-1933)**

1- मनोज्ञा सौम्यांङ्गी, सकल जग के ताप हरणी,
महाकारा श्यामा, अमर गण के सौख्यकरिणी ।
रखे नासा दृष्टि, प्रकट करती स्वानुभव जो,
लखूं तेरी मुद्रा, मिलत हिय में शान्ति सुखदा ।।

2- लिया तूंने जीता, नृपति गण को पूर्व वय में,
दया सिंधो तूंने, सकल अघ नाशे प्रशम से ।
निजात्म प्राबल्य प्रकट महिमा नाथ तुम हो,
लखूं तेरी मुद्रा, मिलत मुझको शान्ति मन में ।।

3- नशाया हे स्वामिन् प्रबलता भी मोह रिपु को,
दिखाया सन्मार्ग - प्रकट करके ज्ञान रवि को ।
सुनाया संदेशा, सकल जिय तो एक सम हैं,
लखूं तेरी मुद्रा, मिलत मुझको शान्ति मन में ।।

4- अनोखी आभा जो, दिखत तुव में शान्ति प्रभु जी,
विरागी भावों, निरत प्रभु हो एक दम ही ।
लखे लाखों देवा, पर न वह वैराग्य युत हैं,
लखूं पै त्वन्मुद्रा, पर नहिं वहां शान्ति मिलती ।।

5- लिया तूंने योग-प्रशम-रत हो नाथ जब ही,
भगे सारे दोष-प्रबल तर भी कार्य रिपु वे ।
दिखावे ये मुद्रा, सकल जग को बात अब लों,
लखूं तेरी मुद्रा, मिलत मुझको शान्ति मन में ।।

6- तिहारी मुद्रा ज्यों, नहिं सुखद हैं चन्द्र किरणें,
नहिं गङंगा पानी, नहिं नहिं सुधा पूर पय भी ।

हिमानी कर्पूरा, नहिं कमल कोशादि नहिं त्यों,
वही शान्ति स्वामी, सकल जग को शान्ति नित दें ।।

7- प्रभो तेरी मुद्रा, सकल जग को ये कह रही,
जगज्जंजालों को, तज तज लखो आत्म निधि को ।
रखो नासा दृष्टि- प्रकट कर दो ज्ञान रवि को,
वही शान्ति स्वामी, सकल जग को शान्ति नित दें ।.

8- रहें ये ही भाव- प्रतिपल, तुम्हें नाथ निरखूं,
रहें ये ही भाव, प्रति दिन तुम्हें, नाथ अरचूं ।
लगा तेरा ध्यान, प्रभुवर बनूं आप सम मैं,
करें पूरी वांछा, विनय बस हीरा नित करे ।।

इष्टोपदेश का दोहानुवाद

(पं0 हीरा लाल जैन सिद्धान्त शास्त्री) (27-10-1935)

1- सकल कर्म के नाश से, प्रगटा सम्यग्ज्ञान ।
नमूं शुद्ध परमात्मा, स्वयं सिद्ध भगवान ।।

2- योग्य हेतु संयोग से, होय स्वर्ण पाषाण ।
त्यों द्रव्यादि सुयोग से, जीव होय भगवान ।।

3- अव्रत नरक निवास से, उत्तम दिव पद मान ।
छाया आतम सम कहा, इनमें भेद महान ।।

4- शिव दायक सत् - भाव से, सुर पद कितनी दूर ।
योजन गामी को न है, कोश गमन तो दूर ।।

5- अनातंक इन्द्रिय जनित, दीर्घ काल तक होय ।

देवों का सुख स्वर्ग में, अनुपम जानों सोय ।।

6- किन्तु वासना मात्र ही, जग के सुख दुख दोय ।
ज्यों विपदा के होत ही, भोग रोग सम होय ।।

7- निज स्वभाव पाता नहीं, मोह व्याप्त अज्ञान ।
ज्यों कोद्रव (शराब) से मत्त के, हो न वस्तु विज्ञान ।।

8- तनु, गृह, धन, वैरी, तिया, पुत्र, मित्र पर जान ।
तदपि मूढ़ जन आपकी, लेते इनको मान ।।

9- इत उत से खग आय कर, वृक्षों पर बस जांय ।
प्रातकाल निज कार्य वश, वे सब ही उड़ जांय।।

10- त्यों चर्तुगति से आय कर, कुल में बहु उपजांय ।
अन्त समय निज देह तज, इत उत को उड़ जांय ।।

11- राग द्वेष दो रज्जु से, आकर्षित यह जीव ।
भव समुद्र में भ्रमत है, चिर से मूढ़ सदीव ।।

12- भवावर्त्त में नित्य ही, नव-कव विपदा होंय ।
घटी पन्न में प्राप्त ज्यों, नव नव घटिका होय ।।

13- यदि धनादि से आपको, सुखिया मानै कोय ।
सो घृत पी ज्वर वान ज्यों, दुखिया ही बहु होय ।।

14- मूरख सम आपकी, विपदा नाहीं लखाय ।
जलता वन भी देख कर, निज तरु नाहिं लखाय ।।

हिन्दी सामायिक पाठ

नम्र - निवेदन

श्री अमितगति आचार्य सामायिक पाठ का यह हिन्दी अनुवाद है। विशेषता यह है कि जो छन्द संस्कृत में हैं वही हिन्दी में हैं।

मूल श्लोक का पूरा भाव उसी छन्द में आ जावे इसका पूरा ध्यान रक्खा गया है। यदि पाठक मूल पाठ पढ़कर फिर इसका पाठ करेंगे और मिलान करेंगे तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा।

निवेदक
हीरा लाल जैन सिद्धान्त शास्त्री

समर्पण
अध्यात्म रसास्वादी, परम निर्ग्रन्थ
श्री 108 गुरुवर की सेवा में
लेखक द्वारा
सादर
समर्पित

हिन्दी सामायिक पाठ

(पं0 हीरा लाल जैन सिद्धान्त शास्त्री) (1923)

1- मैत्री सभी में, गुणधारियों में,
प्रमोद कारुण्य-दुखी जनों में ।
मध्यस्थता हो नित उन्मुखों में,

यह बुद्धि दें जिन देव मेरे ।।

2- अनन्त वीर्यान्वित, वीतरागी,
शरीर से भिन्न करूं निजात्मा ।
ज्यों कोश से भिन्न करें कृपाण,
देवेन्द्र, देवें यह शक्ति मेरे ।।

3- दुःखों-सुखों में, अरि बन्धुओं में,
वियोग संयोग दशादिकों में, ।
प्रासाद में भी अथवा वनों में,
जिनेन्द्र दें बुद्धि समान मेरे ।।

4- अज्ञान नाशी तुव पाद दोनों,
बसें सदा ही चित मांहि मेरे ।
चित्राङ्कित ज्यों, मणि दीपिका ज्यों,
कीले गये या - स्थिति पा गये हों ।।

5- एकेन्द्रिय को आदि लगा अनेकों,
प्राणी मरे हों चलते हुए में ।
प्रमाद से पीड़ित छिन्न भिन्न,
हों पाप मिथ्या सब देव मेरे ।।

6- ह! मुक्ति मार्ग - प्रतिकूल हो के,
या, इन्द्रियाधीन विमूढ़ होके ।
चारित्र की शुद्धि विलुप्त की हो,
तो नाथ! मिथ्या मम पाप होवे ।।

7- मनो वचः काय कषाय से मैं,
संसार दुःख प्रद पाप कीने ।
आलोचना वा, कर आप, निन्दा,

नाशूं, यथा वैद्य विषादि नाशे ।।

8- चारित्र की शुद्धि विषैं कदाचित्,
अति क्रमादि - व्यति पात होवें ।
हो या अनाचार, व्यति क्रमा वा,
शुद्ध्यर्थ निन्दा अब मैं करूं हूं ।।

9- क्षति मनः शुद्धि - विधि अति क्रमा,
व्यतिक्रमा शीलव्रती विलंघना ।
अक्षार्थ-वृत्ति - व्यतिचार संज्ञा
कहें अनाचार अति प्रवृत्ति को ।।

10- हे नाथ! मात्रा पद हीन वाक्य,
प्रमाद से जो कुछ भी कहा हो ।
सरस्वती देवी, क्षमा करें मुझे,
देवें तथा केवल बोधि लक्ष्मी ।।

11- चिन्तामणी जो चित्त चिन्त्य दाता,
देवें सदा बोधि समाधि शुद्धि ।
स्वात्मोपलब्धि शिवसौख्य सिद्धि,
सरस्वती देवि, सदा यही दें ।।

12- योगीश ध्याते जिसको सदा ही,
नृपेन्द्र, देवेन्द्र नमें जिसी को ।
गाते जिसे वेद पुराण शास्त्र,
वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

13- जो दर्शन ज्ञान सुख स्वभावी,
समस्त संसार विकार हारी ।
समाधि से गम्य परात्म संज्ञी ,

वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

14- विध्वंसता जो भव दुःखजाल,
निरीक्षता जो जगदन्तराल ।
अन्तस्थ जो योगि- निरीक्षणीय,
वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

15- जो मुक्ति का मार्ग प्रकाशकारी,
जो जन्म मृत्यु व्यसनादि हारी ।
त्रिलोक-लोकी पर निष्कलङ्क,
वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

16- स्वाधीन कीने सब जीव मात्र,
वे राग द्वेषादि रहे न जिसके ।
अतीन्द्रिय-ज्ञानमयी सदा जो,
वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

17- जो सर्व- व्यापी निज ज्ञान द्वारा,
सदा सुखी बुद्ध विनिष्ट-कर्मा ।
ध्याया विनाशे सब के विकार,
वही जगन्नाथ बसे हृदय में ।।

18- स्पष्ट होता न कलङ्क-पङ्क से,
जो ध्वान्त द्वारा नित सूर्य को ज्यों ।
निरञ्जनो, एक अनेक रूप,
मैं प्राप्त होता शरणे उसी की ।।

19- जिनेन्द्र, तूं लौकिक सूर्यहीन,
प्रकाश तौ भी तिहुं लोक तेरा ।
स्वात्मस्थ हो जो नित ज्ञान रूपी,

मैं प्राप्त होता - शरणे उसी की ।।

20- हां देख के शान्त स्वरूप तेरा,
देता दिखाई यह विश्व सारा ।
शुद्धात्म जो आदि सु अन्त हीन,
मैं प्राप्त होता - शरणे उसी की ।।

21- नाशे सभी काम विकार मूर्च्छा,
विषाद् निद्रा भय शोक चिन्ता ।
दावाग्नि ज्यों वक्ष समूह नाशे,
लेता सहारा उस देव का मैं ।।

22- माना नहीं आसन ध्यान का है,
धरा, कुशा, डाभ, तृष्णादि को भी ।
हे नाथ, नाशे, विषयादि जिसने,
कहा वही संस्तर शुद्ध तूंने ।।

23- न सांथरा साधन है समाधि का,
न लोक पूजा न च संघ एकता ।
संसार को छोड़ कुवासनऐं,
अध्यात्म में लीन रहो सदात्मन् ।।

24- बाह्यार्थ मेरे कुछ भी नहीं है,
मैं भी, कभी भी उनका नहीं हूं ।
यों चिंत के बाह्य विचार छोड़ो,
मुक्तयर्थ स्वात्म स्थित हों सदा ही ।।

25- तूं आप में आप समस्तदर्शी,
तूं, दर्शन ज्ञान सुव्रत्तधारी ।

एकाग्र हो चित्त जहां कहीं भी,
पाता वहीं साधु, समाधि नाम ।।

26- आत्मा सदा है, अविनाशि मेरा,
सर्वांङ्ग सिद्धान्त स्वरूप ज्ञाता ।
हैं सर्व ही अर्थ वहि स्वरूप,
विभाव है कर्म स्वरूप जन्म ।।

27- शरीर से भी जिसका न ऐक्य है,
कहां कथा है फिर पुत्र मित्र की ।
पृथक् करो चर्म शरीर पिंड से,
निराश्रयी रोम कहां रहेंगे ।।

28- संसार में दुःख सदा अनेकों,
पाता वही जीव शरीर-योग में ।
जो चाहते निर्वृत्ति सौख्यकारी,
सो ये जगज्जाल समस्त छोड़ो ।।

29- संसार कांतार निपात वाले,
विकल्प दुःखप्रद सर्व छोड़ो ।
समस्त से भिन्न लखो निजात्मा,
हो लीन आत्मन्, परमात्म तत्व में ।।

30- स्वयं किये कर्म सुपूर्व काल में,
भला बुरा वे फल नित्य देते ।
हां ईश्वर प्रेरित कर्म भोग वे,
स्वकीय हों कर्म निरर्थ जो किये ।

31- स्वकीय पूर्वार्जित कर्म छोड़ के,

कोई किसी को कुछ है न देता ।
द्वितीय-दाता यह भाव मिथ्या,
छोड़ो यही भाव कुभाव सारे ।।

32- जो परमात्मा अमित गति पूजा,
सर्व विविक्त सुखी गत दोषा ।
नित्य सु ध्याया मन में जिसने,
विभवमयी पंचम गति पायी ।

33- इस बत्तीस सुवृत्तों से जो,
एक चित्त परमात्म जपे ।
स्वात्म-स्वरूप प्राप्ति कर फिर वह,
मोक्ष सौख्य को नियत लहे ।।

श्री कल्याण आलोचना

1- श्री वर्द्धमान परमात्मन्, पूज्यदेव,
तेरे सदा युगल पाद सरोज पूजूं।
आत्मीय वा पर विशुद्धि निमित्त से मैं,
आलोचना सकल सौख्यकरी कहूं हूं।।

2- संसार में भ्रम रहा चिरकाल से तूं,
मिथ्यात्व के वश हुआ निज रूप भूला।
पै कर्मबंध-अवमर्दक-बोधि लाभ,
हा! आज लों नहिं हुआ तुझको कभी भी।।

3- तूने भव-भ्रमण को करते हुए हा!
आराधना न अबलों जिनधर्म की की।
जिसके बिना सतत दुःख अनन्तवार,

भोगे अहो नहिं पता जिसका तुझे है।।

4- संसार में भ्रमण को करते हुए ही,
हा मृत्यु के दुख सहे जिसका न पार।
सर्वज्ञ देव बिन तो उनकी कभी भी
जानी न जाय गणना इस लोक बीच।।

5- जा पाप के फल सदैव निगोद बीच,
छ्यासठ सहस्र त्रय सौ छत्तीसवार।
तूने किये मरण हा, नित बार बार,
अन्तर्मुहूर्त लघुकाल विषें सदा ही।।

6- अस्सी सु साठ अरु चालिस क्षुद्र जन्म,
कीने मुहुर्त्त इक में विकल त्रयों में।
चौबीस क्षुद्र-भव तो पंचेन्द्रियों में,
कीने, तथापि कुछ याद रही तुझे न।।

7- हां, क्रोध को कर परस्पर जीव सारे,
पाते भयानक सुनारक दुःख को हैं।
यों जान भी अधम चित्त, न धर्म सेवे,
हा, कष्ट कौन बढ़कर इससे तुझे है।।

8- माता-पिता, स्वजन, बंधु, सुमित्र भाई,
कोई न साथ जग में चलता कभी है।
संसार में भ्रम रहा चिरकाल से तू,
साथी कभी न जग में कोई हुआ है।।

9- होती विनाश जब आयु मनुष्य की है,
तो आयु दान करने न समर्थ कोई।
देवेन्द्र, नाग, धरणेन्द्र, नृपेन्द्र हो, या,

हो औषधादि मणि-मंत्र सुजैव तंत्र।।

10- तूने विशुद्ध परिणाम सुयोग से ये,
श्री जैन का परम-पावन मार्ग पाया।
प्रत्येक ही समय में करके प्रयत्न,
मानुष्य जन्म यह सार्थक, तात कीजे।।

11- सम्यक्त शुद्ध गुण के प्रति पक्ष जेते,
मिथ्यात्व भेद जिन आगम में बताये।
श्रद्धान जो यदि किया अज्ञान से तो,
मिथ्या स्वरूप मम पाप प्रभो, सभी हों।।

12- जुआ शराब, पल-भक्षण आदि सातों,
सेये सदा व्यसन, हा! जिनदेव मैंने।
हा, त्याग भी नहिं किया अबलौं कभी मैं,
मिथ्या स्वरूप मम पाप प्रभो, सभी हों।।

13- जेते अणुव्रत, महाव्रत शीलभेद,
मैंने लिये, गुरु दिए, प्रभु आजलों सो।
जो जो विराधित किये, उनमें सदा ही,
मिथ्या स्वरूप मम पाप प्रभो, सभी हों।।

14- नित्ये तरादि छह धातुमें सात सात,
छै लाख हैं विकल में, दश लाख-वृक्ष।
हैं चार लाख, सुर नारक, औ पशूके,
चौदह सु लाख नर योनि विषें कहे हैं।।

15- चौरासि लाख इन योनिन में सुजीव,
घूमे सदा निज स्वरूप विशुद्ध भूला।
अज्ञान से कर सका न दया उन्हों पै,

मिथ्या स्वरूप मम पाप प्रभो, सभी हों।।

16- भू, शंख आदि त्रसथावर जीव जेते,
नाना स्वरूपमय आगम में बताये।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

17- चारित्र दोष जितने मैंने किए हों,
या हो वलगई कुछ व्रतादिक में बुराई।
सामायिकादि व्रतमें दश धर्म में या,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

18- जे फूल, बेलि, फल, पत्र विनाश कीने,
स्नानादि या बिन छने जल से, जु कीनें।
याकी विराधन सुधोवन आदि से मैं,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

19- पाला न शील तप संयम आदि मैंने,
धारी क्षमा विनय आदि न अल्प मैंने।
हा! भावना तक नहीं कुछ भी कभी की,
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

20- हा कन्द मूल फल आदि सचित्त खाए,
औ, रात्रि भोजन किया सुख मान मैंने।
अज्ञान से इस तरा बहु पाप कीने,
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

21- सत्पात्र-दान, जिन-पूजन, देव तेरी,
कीनी, कभी न गमनादिक शुद्धि मैंने।
हा, भावना तक कभी मन में न आई,

सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

22- आरंभ संगवश हो बहु पाप कीने,
होके प्रमादवश, जीव विनाश कीने।
आर्त्तादि ध्यान धर पाप सदा कमाया.
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

23- हा, ढाई द्वीप सम्बन्धि-त्रिकालवर्त्ती,
संसार-तारक जिनेश्वरदेव की मैं,
आराधना कर सका नहिं स्वप्न में भी,
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

24- अर्हंत सिद्ध अरु सूरिसु पाठकों का,
औ, सर्व साधुयुत श्री परमेष्ठियों का।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

25- जैनेन्द्र-वाणि, प्रतिबिम्ब सु जैनधर्म,
या कृत्रिमादि जिनबिम्ब स्वरूप का मैं।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

26-
सम्यक्त ज्ञान व्रत के जिनदेव ने जे,
हां, आठ आठ अरु पांचसु भेद गाये,
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

27- जो पांच ज्ञान जिन आगम में बताये,
सत्यार्थ अर्थ तिनका नहिं जान मैने।

अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

28- हां द्वादशांग श्रुत के जितने सुभेद,
तीर्थेश ने परम पावन हैं बताये।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

29- जे पंच इन्द्रिय-जयी निर्ग्रन्थ रूप,
पालें सहस्र दश आठ जु शीलभेद।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

30- जो लोक में जनक के सम हैं बताये,
वे ऋद्धि प्राप्त गुरुवर्य गणेशवर्ग।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

31- निर्ग्रन्थ साधु अरु श्रावक जे कहावें,
आर्या तथा गुणवती गृहस्वामिनी जे।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

32- जे देव, नर्क, नर, तिर्यग् योनि जीव,
नाना प्रभेदमय जो छह काय के हैं।
अज्ञान से यदि विराधन जो किया हो,
तो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

33- जो क्रोध-मान छल लोभ रु राग द्वेष,
मोह-स्वरूप बन भाव अशुद्ध राखे।

अज्ञान लीन बनके हा, पाप मैंने
जेते किए, सकल वे मम नाश होवें।।

34- होके प्रमादवश आरम्भ आत्मस्वरूप
हिंसा, असत्य, परवस्तु परांगना को।
हा, सेय-सेय, बहु पाप सदा कमाया,
सो वे समस्त मम दुष्कृत झूंठ होवें।।

35- मैं नित्य एक निजरूप स्वभाव सिद्ध,
हूं मुक्तरूप नित सर्व विकल्प से मैं।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

36- मैं हूं अमूर्त, वर्णादिक चार हीन,
बाधा विना दृग अनन्त सुज्ञानधारी।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

37- मैं एक ही समय में निज ज्ञान द्वारा,
सम्पूर्ण ज्ञेय लख के रमता स्वरूप।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

38- एक स्वरूप अथवा बहुरूप में हूं,
ऊर्ध्व-स्वभाव-गतिरूप सदा रहूं मैं।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

39- देह-प्रमाण अविनाशि रहूं सदा मैं,
विस्तार से बन सकूं पर लोक मान।

सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

40- मेरा पवित्र जब रूप सुव्यक्त होवे,
हो बोध-दृष्टि तब तो मम एक साथ।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

41- जो है विभाव गुण मुक्त पवित्र रूप,
आनन्दमय, विमलमूर्ति, गुणों भराजो।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

42- जो शून्य भी अरु अशून्य स्वरूप भी है,
ना कर्म-कर्म बिन, ज्ञान सुख स्वरूप।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

43- जो ज्ञान से सतत भिन्न अभिन्न रूप,
आनन्द रूप सुखिया जिसका स्वभाव।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

44- जो है अनित्य अरु नित्य प्रमेयरूप,
जो दीर्घ और लघुभेद-विहीन सत्य।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

45- जो है शुभाशुभ विभाव विहीन, सत्य,

शुद्ध-स्वरूप जिसने निज पा लिया है।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

46- भार्या, नपुंसक नहीं, न नर-स्वरूप.
हां पुण्य पाप मय भी न कदापि मैं हूं।
सो-लोक में शरण तो मम है न दूजा,
है एकही शरण सो परमात्म देव।।

47- मेरा न कोई जग में, मैं न किसी का,
ये बन्धु मित्र स्वजनादिक हैं न मेरे।
ज्ञाता स्वरूप मम आतम है अकेला,
जो कर्म नाश करके शिव धाम पावे।।

48- मेरे रहें सतत ही जिनदेव स्वामी,
श्री जैनशास्त्र बिच ध्यान रहे सदा ही।
संन्यास से मरण हो जिनदेव मेरा,
ये संपदायें जगमाहिं मुझे सदा दें।।

49- सर्वज्ञ देव, जिनदेव सदा हमारे,
स्वामी रहें जगत में जबलों निवासा।
होवें दयामय सदा परिणाम मेरे,
होवे तथा परम पावन जैनधर्म।।

50- जो पालते परम पावन धर्म को हैं,
वे तो दिगम्बर महा मुनि हों य मेरे।
जौलों न मोक्षपद प्राप्त अहो मुझे हो,
ये वस्तुऐं भव-भवों बिच प्राप्त होवें।।

51- हा! दुःख भोगत गया सुअनन्त काल,

पै जैन धर्म-धन प्राप्त किया न मैंने।
संन्यास में सुखद यत्न, न नाथ कीना,
हा! व्यर्थ ही सकल काल गमा दिया है।।

52- आरादना परम प्राप्त मुझे हुई है,
होऊं सयत्न उसके नित पालने में।
संसार की सकल सिद्धि मिले इसी से,
सम्पत्तियां प्रतिदिनां मिलती इसी से।।

53- हां, काललब्धि अब तो मुझको मिली है,
सम्पत्ति पूर्ण अनयास मुझे मिली है।
रत्नत्रयी परम माल मुझे मिली है,
हां क्यों न भक्तियुत धारण सो करूं मैं।।

54- आलोचना सुखमयी सद्-भाव से जो,
रात्रिं दिवा करत हैं, शिव सौख्यकारी।
जाते वही परम पावन-धाम को हैं,
पाते वही परम पावन मोक्ष को हैं।।
।।-------------।।

आचार्य समन्तभद्र कृत

स्वयम्भू स्तोत्र का पद्यानुवाद

आदिनाथ जिन स्तुति

1- जो है हितैषी जग जन्तुओं का,
अशेष विज्ञान विभूति वाला ।
विराजता है कर नष्ट ध्वान्त,
निरोग ज्यों ज्ञान सु रश्मि द्वारा ।।

2- प्रजेश हो पीड़ित सर्व देश को,
कृष्यादि षटकर्म प्रभो सिखाता ।
प्रबुद्ध हो अद्भुत भाग्यशाली,
विरक्त भगवन जग से हुए थे ।।

3- जो छोड़ के सागर वस्त्र वाली,
सती वधू ज्यों वसुधा बन्धु को ।
मुमुक्षु इक्ष्वाकु वरेण्य श्रीमान्,
सहिष्णु हो दीक्षित हो गये थे ।।

4- राजादि का मूल समाधि तेल से,
जला दिया निर्दय रूप होके ।
जिज्ञासुओं को शिव देशना दे,
प्रभो बने हो शिव धाम वासी ।।

5- सुमन्त बन्ध पर-वादि जेता,
वृषेश सर्वज्ञ निरंजनी जो ।
पवित्र मेरे मन को करें वो,
महेश श्री नाभिज आदि स्वामी ।।

अथ अजितनाथ स्तोत्रम्

1- सुवीर्यशाली जग में अजय्य,
क्रीड़ाओं के सृष्ट मुखारबिन्द ।
प्रभाव को देख सु बन्धुओं ने,
सुनाम रक्खा अजितेश तेरा ।।

2- अजय्य सम्बंध पुनीत तेरा,
सिद्धान्त सर्वत्र प्रसिद्ध आज है ।

लेते सदा नाम पवित्र जिसका,
मनुष्य सर्वत्र स्व सिद्धि भाव से ।।

3- पैदा हुआ जो प्रभु शक्तिशाली,
भव्या क्षमालीन-कलङ्क शान्ति को ।
महामुनि मुक्ताध तोष दे ही,
विकासनार्थ रवि पद्य के ज्यों ।।

4- जिसने कहा श्रेष्ठ सुधर्म तीर्थ,
प्राणी जिसे पा सब दुःख जीते ।
जांय यथा शीतल कुंड पा के,
गनेश ज्यों धर्म सुतप्त जीव ।।

5- वो ब्रह्म ज्ञानी सम मित्र वैरी,
सद् ज्ञान से जीत कषाय दोष ।
पा आत्म लक्ष्मी अकिंचनार्थ जो है,
सो दे, महा श्री अजितेश मेरे ।।

संभव जिन स्तुति

1- तृष्णादि जन्य भव रोग से जो,
संतप्त प्राणी जग में भरे हैं ।
तूं नाथ आकस्मिक वैद्य उनका,
अनाथ ऋण भव वैद्य के ज्यों ।।

2- अनित्य, अत्राण, जरान्तका से,
प्रसक्त मिथ्यात्व विभाव दोष ।
प्रभो जगज्जाल विलोकि ऐसा,
निरंजनी शांति अनन्त पाई ।।

3- शत ह्रद्दोन्मेष समान सौख्य,
तथापि तृष्णा नहिं तृप्ति कारी ।
तृष्णाभि वृद्धि तपती सदा है,
तूंने कहा ऐसा नाथ मेरे ।।

4- वे बंध मोक्ष औ हेतु उनके,
औ बद्ध मुक्त फल युक्ति का त्यों।
हैं नाथ स्याद्वादि युक्त तेरे,
शास्ता अनेकान्त सुधर्म का तूं ।।

5- है इन्द्र भी हीन तब स्तुति को,
तो क्या कहेगा मुझ अज्ञ जैसा ।
पै भक्ति से की स्तुति पाद जब तेरी,
हे आर्य मेरे शिव सौख्य धारा ।।

अभिनन्दन जिन स्तुति

1- प्रशंसनीय, अभिनन्दनीय
हैं नाथ तेरे गुण पूज्यनीय ।
दयावधू को, क्षमता सखी को,
बना समाधिस्थ प्रभो हुए थे ।।

2- जो भंगुरीय विधि बंध में भी
मं भेद मिला ग्रह में पड़े हैं ।
माने तथा स्वामी, नित्य जिसे मनुष्य
सो तत्व तूंने 'सत्' है बताया ।

3- क्षुदादि दुःख प्रतिकार से है
देह स्थिति ना कि, तदर्थ भोग है ।

कोई नहीं है गुण गुण देह से यों,
सत्यार्थ भगवन तूंने सुनाया ।

4- रहे लोभ प्राणी अनुबन्ध दोष से,
प्रवर्तते ना भय से अकार्य मेरे ।
सर्वत्र अनुबंधज दोष ज्ञाता,
क्यों मग्न होता सुख में सुझाया ।।

5- है जनों को अनुबंध तापकृत,
तृष्णा बढ़ावे फिर भी रहेगा ।
प्रभो बताया यों लोक हित को,
बना इसी से जगवंद्य हीरा ।।

सुमतिनाथ जिन स्तुति

1- अन्वर्थ नाम सुमतेश तूं है,
सुयुक्ति युत मत आप माना ।
सर्व क्रिया कारक तत्व सिद्धि,
नहीं पराये मन में प्रभो है ।।

2- है तत्व तो एक अनेक रूप,
भेदान्वय ज्ञान भयी सुसत्य ।
मृषोपचार फर के सुलेप में,
है शेष का लोप स्वयं प्रसिद्ध ।।

3- असत्य युक्त सत् है कथंचित,
न पुण्य होगा, नभ पादयों में ।
सर्व स्वभाव च्युत अप्रमाण,
स्व वाग् विरुद्ध सब शेष मत हैं ।।

4- पैदा न हो नित्य विनाश होगा,
ना है क्रिया कारक भेद युक्त ।
होता असज्जन्म समो विनाश,
दीया तमः पुद्गल भाव से हैं ।।

5- माना कथंचित् विध औ निषेध को,
सर्वत्र है मुख्य गुण व्यवस्था ।
ये है बताया सुमते जिनेन्द्र,
हे नाथ पूजों मति मान तो कूं ।।

पद्म प्रभु स्तुति

1- पद्म प्रभ, पद्म पलाश लेश्य
पद्मालया लिंगित चारुमूर्ति ।
हैं आप तो भव्य - पयो सहों के,
पद्माकरों ज्यों नित्य पद्म बन्धु ।।

2- थे युक्त लक्ष्मी व सरस्वती से,
हो सामने मुक्ति वधू सती के ।
सरस्वती और समग्र शोभा,
सर्वज्ञ लक्ष्मी तज दी प्रभो तूं ।।

3- प्रभो शरीर-द्युति से छिपा था,
बालार्क रश्मि इत कान्ति होके ।
समस्त ही गन्ध कुटी प्रभा से
हां व्याप्त भगवन तब हो गई थी ।

4- सहस्र पत्राम्बुज युक्त चार से,

करते हुए पल्लव युक्त व्योम जे ।
पादाम्बुजों से कर नष्ट मार,
प्रजा जनों का हर्षक तूं बना था ।।

5- गुणार् बुधे नाथ तब स्तुति को,
न शक्त है इन्द्र करे कराये ।
वाचाल पै देव करे मुझे तो,
ये भक्ति माला तित दिव्य तेरी ।।

श्री सुपार्श्व स्तुतिः

1-जो स्वास्थ्य आत्यन्तिक है नरों का,
सो स्वार्थ है, भागे न भंगुरात्मा ।
तृष्णार्त के हो नहि ताप शान्ति,
ऐसा कहा हे भगवन सुपार्श्व ।

2- गाड़ी चले ज्यों नर के सहारे, (प्रेरणा से)
त्यों जीव से है चलता शरीर।
वीभत्स, पूर्ति, क्षयि ताप रूपी,
निरर्थ है स्नेह, प्रभो बताया।।

3- हेतु द्वया विष्कृत कार्य वाली,
अलंघ्य शक्ति भवि तव्यता है ।
हो कार्य संलग्न क्रियार्त मैं हूं,
अनीश ये जन्तु प्रभो बताया ।।

4- हो मृत्यु से भीत, न मोक्ष पावे
चाहे सदा मोक्ष, न लाभ होता ।
तो भी वृथा ही भय काम वश्य,

जपैं जगज्जीव प्रभो बताया ।।

5- तत्वार्थ से हैं भगवन् प्रमाना,
मां बाल ज्यों, आप हितोपदेशी ।
गुणी जनों के शिव मार्ग हेता,
पूजूं तुझे मैं नित भक्ति द्वारा ।।

चन्द्र प्रभु जिन स्तुति

1- चन्द्र प्रभ चन्द्र मरीचि गौर,
सुरम्य चन्द्र जग में अनोखे ।
ऋषीन्द्र वंद्य अभिवन्दता हूं,
तूं है जित स्वान्त कषाय बन्ध ।।

2-शरीर लक्ष्मी परिवेश भिन्न,
विशेष ज्यों सर्व सुरश्मियों से ।
समस्त ही बाहिज अन्तरंग,
ध्यानाग्नि से ध्वान्त प्रभो नशाया ।।

3- स्वपक्ष-प्राबल्य-मदावलिप्त,
थे जोग वादी गज-मत्त गंड ।
स्याद्वाद रूपी हरि वाद से वे,
हां हो गये थे भगवन हतश्री ।।

4- समस्त दुख क्षय शासनेश,
अनन्त धामेश्वर, विश्व नेत्र ।
स्वामी बना लो परमेष्ठिता का,
हो के महा अद्भुत तेज वाला ।।

5- वो चन्द्रमा भव्य कमोदिनी का,
है हीन जो अम्र कलंक भेद से ।
वाङ्ग-न्याय जिसकी है रश्मि माला,
पवित्र मेरे मन को करें सो ।।

पुष्पदन्त स्तुति

1- एकान्तवाद - प्रतिकूल तत्व,
प्रमाण सिद्‌ध उभय स्वभावी ।
स्वतेज से हे सुविधे बताया,
माना नहीं जो कि विपक्षियों ने ।।

2- वो है, वही है, न प्रमेय तत्व,
प्रतीति शेती सबको कथंचित् ।
न सर्वथा भिन्न अभिन्नता है,
विधि निषेधात्मक शून्य दोष से ।।

3- है नित्य तत्व, यह हो प्रतीति,
अनित्य है और प्रतीति योग से ।
विरुद्‌ध है न, बहिरन्तरंग,
निमित्त नैमित्तिक योग से तो ।।

4- अनेक-एक, पद वाच्य होवे,
ज्यों वृक्ष सामान्य विशेषता से ।
'स्यात्' शब्द रक्खे पर की विवक्षा,
है मुख्यता में अपवाद दर्शी ।।

5- ये मुख्य गौणार्थक वाक्य ही जो,

अपथ्य हैं अन्य अशेष पक्ष में ।
सो पूज्य है तूं जगनाम को भी,
हैं पूज्य तेरे तव पाद पद्मा ।।

शीतल नाथ जिन स्तुति

1- न शर्मदा चन्दन चन्द्र रश्मि,
न गंग पानी नहिं पुष्पमाला ।
हैं नाथ जैसी तु वाहृयमाला,
शमां तु गर्मा सुखदा जनों को ।

2- सुखाभिलाषा नलदाह मूर्च्छित,
विषाग्नि मोही निज चित्त ईश ।
हां शान्त ज्ञानामृत से बनाया,
करे यथा वैद्य स्व देह रक्षा ।।

3- स्व वृत्ति वा भोगज लालसा से,
दुखी प्रजा निद्रित रात्रि में हो ।
हे आर्य नक्तं दिन सावधान,
जागे सदा आत्म विशुद्धि मार्ग में ।।

4- संतान औ संपत्ति लालसा से,
करें तपस्वी बहु कर्म नित्य ।
पै आप संसार विमुक्ति भाव से,
रत्नत्रयी स्वीकृत वृत्ति की थी ।।

5- तूं उत्तम ज्योति कहां अजन्मा,
कहां परे बुद्धि लवोद्भूतक्षत ।

तुझे इसी से निज के हितैषी,
विद्वान हे शीतल पूजते हैं ।।

श्रेयांस जिन स्तुति

1- श्रेयास श्रेयस्कर मार्ग गामी,
श्रेयोपदेशी अविजयत्व मय ।
यों शोभता तूं भुवन त्रयों में,
ज्यों सूर्य निर्मुक्त घना घनों में ।।

2- निषेध युक्त विधि है सदा ही,
प्रमाण है अन्यतर प्रधान ।
हो गौण दूजा पर मुख्यता में,
दृष्णान्त व्यापी नय नाथ तेरी ।।

3- जो इष्ट सो मुख्य अनिष्ट गौण,
यों तत्व का रूप निरंश है ना ।
ज्यों शत्रु-मित्र द्वय युक्त शक्ति,
हो वस्तु भी त्यों नित कार्यकारी ।।

4- दृष्टान्त सिद्ध हो जब विवाद,
प्रसिद्ध हो साध्य न हेतु तैसा ।
यौ सर्वथै कान्त विनाशकारी,
होती विजेयी तब दृष्टि नित्य ।।

5- एकान्त विध्वंसक वाक् शरों से,
हां जीत के मोह अरी अजय्य ।
हो नाथ कैवल्य विभूति सम्राट,
हो पूज्य मेरे भगवन् इसी से ।।

वासुपूज्य जिन स्तुति

1- है पूज्य सन्मार्ग क्रियाओं में तूं,
हे वासुपूज्य त्रिदशेन्द्र पूज्य।
अल्पज्ञ मुझसे भी पूज्य है तूं,
पूजा न जाता रवि दीप से क्या ?

2- न अर्थ है पूजन से तुझे तो,
न द्वेष है नाथ बुराइयों से ।
तथीपि तेरी गुणकीर्ति मोकूं,
पवित्र रक्खे दुरिता जनों से ।।

3- मुनीन्द्र, तोकूं नित पूजते कूं,
है पाप लेश पर पुण्य भारी ।
दोषार्थ हो ना विष की कणी ज्यों,
न दूषिका शीत सुधाम्बु राशि में ।।

4- जो बाह्य वस्तु गुण दोष दायी,
निमित्त अभ्यन्तर मूल कर्म ।
अध्यात्म तल्लीन तुझे वही तो,
निरर्थ है, निर्जर हेतु है या ।।

5- बाह्ये तरो पाधि समग्रता तो,
तेरे लिए द्रव्य गत - स्वभाव ।
न अन्यथा मोक्ष मिले जनों को,
कहा इसी से बुध पूज्य (वंद्य) तूं है ।।

विमल जिन स्तुति

1- जो द्रव्य पर्याय मयी नयों से,
बिना अपेक्षा, स्व पर प्रकाशी ।
होता वही है, विमलेश तेरे,
सापेक्ष सत्व स्व परोपकारी ।।

2- जों एक की कारक अर्थ सिद्धि में,
समर्थ होता सब कारकों से ।
तथैव सामान्य विशेष रूप,
मानी सभी नय गुण मुख्य रूप से ।।

3- परस्परापेक्षक चिन्ह ही से,
प्रसिद्ध सामान्य विशेष तेरे ।
हे नाथ, होते स्व परावभासी,
प्रमाण है ज्ञान स्वरूप जैसे ।।

4- विशेष का वाचक वाक्य जैसे,
विशेष का हो भगवन् नियन्ता ।
प्रसक्त सामान्य रहे उन्हों में,
स्याद्वाद की हो यदि जे विवक्षा ।।

5- स्याद्वाद युक्त नय नाथ तेरी,
रसोपविद्ध ज्यों लोह धातु में ।
हों इष्ट की साधक सो इसी से,
पूजें हितैषी जन नाथ तो कूं ।।

अनन्त जिन स्तुति

1- अनन्त दोषान्वित मोहयुक्त,
है देह का संग चिरंतनीय ।
हो तत्व में लीन, प्रभो तुझी ने,
जीता इसी से कहते अनन्त जित्

2- कषाय वैरी जड़ से मथे तूं.
जो थे महा दुष्ट विनाशकारी ।
सुखा दिया दुर्मद का मनाऐं,
समाधि रूपी औषधि पिला के ।

3- परिश्रमाम्बु भय वीचि नाली,
तृष्णा नदी आर्य सुखाई तूं ने ।
निरभ्र (असंग) तेजस्वि रवि प्रभा से,
सो श्रेष्ठ है निवृति धाम तेरा ।

4- सौभाग्य पायें सब मित्र तेरे,
विनाश तेरे सब शत्रु पावें ।
मध्यस्थ पै तूं रहता सभी पै,
आश्चर्य भगवन् मुझ को महा है ।।

5- तूं यों, इसी रूप, मुनीश ऐसा,
प्रलाप भगवन् मुझ अज्ञ का है ।
अशेष माहात्म्य 'न' गा सकूं मैं,
कल्याणकारी तव भक्ति लेश ।।

श्री धर्म जिन स्तुति

1- धर्म तीर्थ निर्दोष चलाया,
धर्म नाम से संत पुकारा ।

जला कर्म वन तपो अग्नि से,
शाश्वत सुख पा लिया आप से ।।

2- देव मानव समूह से तथा,
ज्ञानियों से घिरा शोभता यथा ।
तारकाओं से घिरा पूर्ण चन्द्रमा,
शोभता गगन बीच विमल दीप्ति मा ।।

3- प्रातिहार्य विभों से संयुत,
होकर भी भगवन् हैं विरहित ।
मोक्ष मार्ग सबको समझाया,
शासक - मद पर लेश न आया ।।

4- काय, वचन, मन की प्रवृत्तियां,
हुईं नाथ पै नहीं चिकीर्क्ष ।
बिना विचारे हुईं एक ना,
अद्भुत महिमा भगवन् तेरी ।।

5- जीत मानुषी प्रकृति नाथ तूं,
बना देवताओं का देव ।
हुए इसी से परम देवता,
हों प्रसन्न मुझ पै धर्मेश ।।

श्री शान्ति जिन स्तुति

1- रक्षा प्रभो कर चिर लों प्रजा की,
राजा बने थे अतुल प्रतापी ।
पीछे दया मूर्ति मुनीश हो के,
की पाप शान्ति भगवन् स्वयं ही ।।

2- वैरी भयंकर ले चक्र रत्न,
हां जीत के सर्व नरेन्द्र चक्र ।
समाधि का चक्र पुनः चला के,
जीता महा दुर्जय मोह चक्र ।।

3- जो राज्य में राज सुभोग तंत्र,
पा के नृप भी नृप सिंह ज्यों था ।
स्वाधीन पा के अहि हंत लक्ष्मी,
शोभा वही देव सुरा सुरों में ।।

4- नृपत्व में था हां राज्य चक्र,
मुनित्व में औ कारुण्य चक्र ।
पूज्यत्व में सांजलि देव चक्र,
औ था ध्यान में ध्वंसि कृतांत चक्र ।।

5- पायी स्वयं शान्ति स्व दोष शान्ति से,
दें शान्ति को जो शरणागतों को ।
देवें भव क्लेश भयोपशान्ति,
वे शान्ति नाथ भगवान मेरे ।।

श्री कुन्थु जिन स्तुति

1- कुन्थ्वादि सर्व जन पै करके दया को,
हे देव जन्म मरणादिक शान्ति के लिए ।
हो पूर्व में क्षितिपतीश्वर चक्रवर्ती,
हां धर्म चक्र जगदीश तूं ही चलाया ।।

2- तृष्णार्चियां दह सकें नहिं शान्ति राशि,

पै वृद्धि हो करण भोगज लालसा से ।
हो शान्ति काय परिताप विनाश से ही,
यों सोच के विषय मुक्त प्रभो हुए थे ।।

3- हां अन्तरंग तप की परिवृद्धि को ही,
ये बाहिरी तप तपे अति घोर तूं ने ।
कु ध्यान छोड़ जगदीश लगा लिया था,
सद्ध्यान में निज मनोम्बुज को बढ़ा के ।।

4- रत्नत्रयी परम तेज बढ़ा बढ़ा के,
वे घातिया विधि विनाश प्रभो किये थे ।
व्याख्यान दे सकल वेद विधान का तूं,
हां सूर्य ज्यों गगन में बहु शोभता था ।।

5- वे लोक के जनक आदिक नाथ तेरे,
विद्या विभूति कणिका सम भी नहीं थे ।
सो आपको अतुल जान भजें सदा ही,
विद्वान आर्य जन जो निज के हितैषी ।।

श्री अर जिन स्तुति

1- थोड़े गुण को लांघ कर,
तव गुण कथा अपार ।
कहने को नहिं शक्त हूं,
वे हैं अपरम्पार ।।

2- तो भी मुनिवर आपका,
करें स्तवन लवलेश ।
बढ़े हमारा पुण्य यश,
दूषण रहे न लेश ।।

3- लक्ष्मी वैभव चक्र भी,
सार्व भौम साम्राज्य ।
तुझ मुमुक्षु के हो गए,
तृण ज्यों जीर्ण अकाज ।।

4- इन्द्र तिहारे रूप को,
देख तृप्ति नहिं पाय ।
बहु विस्मित वह हो गया,
नेत्र हजार बनाय ।।

5- मोह रूप जो सुभट अति,
है कषाय दुष्पाप ।
दृष्टि उपेक्षा अस्त्र से,
किया पराजित आप ।।

6- त्रिलोक के बिच बसे,
दर्पित है का दर्प ।
मार उसे क्षण में दिया,
करके गर्व सुखर्व ।।

7- गत आगत सब काल में,
जो दुख योनि अपाद ।
की सो तृष्णा सरित को,
ज्ञान नाव से पार ।।

8- यम दुख दाता जगत् को,
जन्म मरण कर्त्तार ।
पा यम अन्तक आप को,
व्यावृत हुआ विकार ।।

9- भूषा वेषा शस्त्र बिन,
ज्ञान दया भर पूर ।
कहता तेरा रूप यह,
वीतराग यह शूर ।।

10- आत्म ध्यान मय तेज से,
भामण्डल प्रकटाय ।
ध्वान्त नष्ट सब कर दिया,
सत्य रूप दिखलाय ।।

11- ज्ञान ज्योति से जो उठी,
महिमा अपरंपार ।
किसे नम्र नहिं कर दिया,
तव चरणों में डार ।।

12- तब वचनामृत हैं प्रभो,
सब भाषा भरपूर ।
करे तुष्ट सब जगत् को,
पिला सुधा का पूर ।।

13- अनेकान्त मय है प्रभु,
तेरा दृष्टि प्रसार ।
मिथ्या सब एकान्त है,
करें आप पर वार ।।

14- पर अवगुण ग्राहक तथा,
निज दोषों में मौन ।
तब ज्ञान श्री का प्रभो,

क्या कर सकता कौन ।।

15- हो अशक्त वे शमन में,
हां निज घाती दोष ।
तब वैरी करते फिरें,
अवक्तव्य का पोष ।।

16- एक नित्य वक्तव्य हैं,
जितने नय एकान्त ।
दूषित सब हैं किन्तु इक,
अनेकान्त ही सत्य ।।

17- तज एकान्ती नियम को,
रखे अपेक्षा पूर्व ।
आत्म वैरि पर के नहीं,
यह स्यात् शब्द अपूर्व ।।

18- अनेकान्त एकान्त नहिं,
नय प्रमाण है सान्त ।
अनेकान्त प्रमाण से,
नय से है एकान्त ।।

19- यों अनुपम तर्कों सहित,
तव शासन आम्लान ।
अर जिन दम तीर्थे हो,
सदबोधक भगवान ।।

20- मति, गुण, विभव स्वरूप में,
वरदागम अनुरूप ।

गुण बिन मैं जो भी कहा,
हरे पाप प्रतिरूप ।।

श्री मल्लि जिन स्तुति

1- प्रभु तिहारे सर्व वस्तु का,
ज्ञान हुआ प्रत्यक्ष अनोखा ।
सर्व सुरा-सुर अंजलि जोडें,
नमस्कार तुझको करते थे ।।

2- स्वर्ण मयी मूर्ति थी जिसकी,
भामंडल से शोभित होती ।
स्यात्पद पूर्वा वाणी जिसकी,
साधु जनों का मन थी हरती ।।

3- प्रतिवादी हो विगलित मान,
बोल न सकते सम्मुख जिसके ।
विकसित पंकज सम मृदु हासा,
भू भी प्रति पद जिसके हुई थी ।।

4- शिष्य साधु ग्रह वैभव जिसका,
जिन शशि तुल्य हुआ भारी था ।
भव समुद्र पीड़ित भवि जन को,
तरण मार्ग मय तीर्थ हुआ था ।।

5- शुक्ल ध्यान मय तपो अग्नि से,
पाप अनन्ते जला दिए थे ।
सो जिन सिंह कृत करणीय,
मल्लि तिहारे शरण पड़ा हूं ।।

मुनि सुव्रत नाथ स्तुति

1- जान मुनीश - व्रत स्थिति सार,
मुनि सुव्रत मुनि वृषभ विचार ।
मुनि परिषद में शोभें ऐसे,
उडु परिषद में शशधर जैसे ।।

2- परिणत मोरे कंठ सम तनु भा,
कृत मद निग्रह विग्रह आभा ।
तपो जनित भामंडल वेष्टित,
गृह परिवेश कान्ति से शोभित ।।

3- चन्द्र कान्ति सम श्वेत रक्त है,
विमल सुरभि मय स्वच्छ देह है ।
अति विस्मय, शिवदाता मेरे,
वाचिक मानस आशय तेरे ।।

4- व्यय उत्पाद स्थिति मय अर्थ, (द्रव्य)
प्रतिक्षण दिखे चराचर सर्व ।
अनुपम वचन प्रभो, ये तेरे,
दें सर्वज्ञ सूचना मेरे ।।

5- निरुपम योग शक्ति से तूंने,
कर्म मलाण्टक नाश जु कीने ।
पाया प्रभुवर है शिव सुख को,
दूर करो मम भव भय दुख को ।।

श्री नमि जिन स्तुति (शिखरिणी छन्द)

1- स्तुति स्तोता के तो, कुशल परिणामार्थ नित हो,
प्रभो हों या न हों, फल पर मिले भक्त जन को ।
मिले यों स्वाधीन, सुलभ जग में मोक्ष पदवी,
सदा पूजें विद्‌वान्, नमि जिन, तुझे भक्ति वश हो ।।

2- अहो धीमन्, तूंने प्रणिधि-मन हो जन्म निगता,
समूल निर्भिन्न, बुध जन तुही मोक्ष पदवी ।
तुझे ज्ञान ज्योति, विभव-कर से शोभित करे,
बने ज्यों खद्‌योत, शुचि रवि विषें, अन्य मत के ।।

3- विधेय, वार्य याङ्‌नुभव उभय मिश्र कुछ हो,
विशेषों से युक्त, नियम विषयी जो अमित हैं ।
सदान्योन्यापेक्ष, बहु नय विवक्षा सहित ही,
कहा ऐसा तत्व, सकल भुवन ज्येष्ठ गुरु हो ।।

4- अहिंसा जीवों का, विदित जग में ब्रह्म परम है,
जहां वो होती है, अणु भर नहीं पाप वहं हो ।
उसी के सिद्‌धयर्थ, पर करुणाधार, उभय,
तजे ग्रन्थ तूंने, सहज धर के वेष विमल ।।

5- वपू भूषावेष उपाधि रहित, शान्ति करण,
कहे वे हैं देव, स्मरशर विषातंक विजयी ।
बिना शस्त्रास्त्रों के, अदय हृदयामर्ष रहित,
इसी से निर्मोह शरण मम हो, शान्ति विलय ।।

श्री नेमि जिन स्तुति (बुधगता छन्द)

1- परम योग बल से तो, कर्मेन्धन को जला दिया जिसने ।
कमल नयन सर्वज्ञ, दे सब को बोध, नेमि जिन सोहै ।।

2- विनय दम तीर्थ नायक. शील जलधि औ अपरिमित वैभव ।
हरिवंश केतु, जिन कुंजर, अजर अरिष्ट नेमि जिन सोहैं ।।

3- त्रिदशेन्द्र मौलि मणियों की, जो है किरण प्रसार से चुम्बित ।
पद युग तेरे निर्मल, विकसित उत्पल समान हैं रक्त ।।

4- नख चन्द्र रश्मि से शोभित, अति सुन्दर शिखरांगुलि स्थल वाले ।
पद युग तेरे पूजें, स्वार्थ हितैषी, गुणी महा ऋषि गण ।।

5- द्‌युति सदरथांग रवि बिम्ब, किरण जटिलांशु मंडल वाला ।
नील कमल सम तेरा, बन्धु जनों से देह तब शोभै ।।

6- हलधर कृष्ण जनेश्वर, स्वजन भक्ति प्रमुदित हृदय होते ।
धर्म विनय के रसिया, पूजैं तेरे चरण युगल आ करके ।।

7- चिन्होत्तम जो भू का, खेचर-भामा-उषित-शिखर वाले ।
ऊर्जयन्त गिरि पर तो, लिखे इन्द्र ने चरण चिन्ह तेरे ।।

8- मेघ पटल से युक्त,जावें, जहां तीर्थ मान ऋषि नित्य ।
प्रीति युक्त हृद्‌यों से, 'ऊर्जयन्त' यह प्रसिद्‌ध है नाम ।।

9- द्रव्य और भावेन्द्रिय, प्रतिघाती हैं, न जान सब पावें ।
किन्तु नाथ तूंने तो, हस्तामल वत् सभी कुछ जाना ।।

10- बुध पूजित जिन तेरा, चरित महाद्‌भुत तथा गुण शाली ।
रमा तुमी में मन को, शान्ति अनोखी हम प्रभु पावें ।।

श्री पार्श्वनाथ स्तुति (बंसस्थ छन्द)

1- तमारन नील बिजली गिराते,
प्रकीर्ण भीमा शनि वृष्टि वाले ।
घना घनों से हो के उपद्रुत,
महा मना जो न चला स्व योग से ।।

2- सुर तडित्, पिंगरु चोप सर्गी,
वृहत्फणा मंडल को बना के ।
रक्षा प्रभो थी नागेन्द्र ने की,
विराग सम्ध्यार्ता उदम्बु के ज्यों ।।

3- स्वयोग निस्त्रिंश सुतीक्ष्ण धार से,
हां मार के दुर्जय मोह वैरी ।
अचिन्त्य अर्हन्त्य विभुति पाई,
त्रिलोक पूजातिशयास्पद प्रभो ।।

4- ऋषीश देख, जिसको विरागी,
तेरे समान बन के मुनीश ।
हां भूल के कानन दुःख सारा,
तेरे सहारे सब आ गए थे ।।

5- सो सत्य विद्या तप का प्रणेता,
सर्वज्ञ औ उग्र कुलाम्बरांशु मान् ।
विलीन मिथ्या पथ दृष्टि विभ्रम,
पूजूं सदा पार्श्व जिनेश को मैं ।।

श्री वीर स्तुति (स्कन्धक छन्द)

1- गुण उन्नत निज यश से,
भासित हों सर्व भुवन में वीर ।
भासित उडु परिषद में,
शशि ज्यों कुन्द शोभा शोभित ।।

2- शासन वैभव तेरा,
कलि में भी आज जय प्रभो पावे ।
दोषरु शासन विभव,
स्तुति करते प्रभा कृशासन हो के ।।

3- अनवद्य स्याद्वाद,
है दृष्टेष्टा विरोधि स्याद्वाद ।
अन्य न है स्याद्वाद,
उभय विरोधी प्ररूपण से तो ।।

4- तूं है सुरासुर महित (पूजित)
ग्रन्थिक सत्वाशय प्रणामा महित ।
लोक त्रय परम हित,
विशुद्ध ज्योति उज्वलद्धामहित ।।

5- सम्यों को अति सुन्दर,
गुण भूषा नाथ तेरा है ।
निज में मग्न प्रभो हो,
जीतो हरि को स्वकान्ति से वीर ।।
6- तुम जिन गत मद माया,
भावों को हो मुमुक्षु वर दाता ।

श्रेयस्कर निर्भायी श्रीमन,
तूंने सुमार्ग बतलाया ।।

7-झरते मद-गज के ज्यों,
हो भगवन तुम मह श्री दाता ।
शम वादी गत ऊर्जित,
हो ऊर्जित औ निः प्रमादी हो ।।

8- बहु गुण सम्पद युत हो क्रूर के भी
मधुर वचन कला वाले,
है जय भंग कला से,
तेरा मन तो समन्तभद्र देव ।।

9- जो निःशेष जिनोक्त धर्म विषय,
जो है गणेश कृत ।
सूक्तार्थ विमल प्रसन्न पद से,
जो अद्वितीय स्तुति ।।

10- अल्प बुद्धि मेरी- तथा,
सिर पर विधि जंजाल ।
भूल चूक सो शोधना,
प्रार्थी हीरा लाल ।।

आसोज वदी 2, संवत् 1991, वीर निर्वाण संवत् 2460, तारीख 10-10-1934 से प्रारम्भ
कर मगसिर वदी 1, तारीख 01-12-1934 शनिवार
वीर निर्वाण संवत् 2461 के प्रातः काल पूरा किया ।
हीरा लाल जैन

श्री षोड़शकारण भावना पूजा

स्थापना

दोहा- षोडश कारण भावना, भाऊँ बारंबार।
चित्त मांहि तिष्ठौ सदा, निज लख करुणा धार।।

ॐ ह्रीम श्री दर्शन विशुद्धयादि षोड़श कारणानि
अत्र अवतरत अवतरत संवौषट अव्हानम।
ॐ ह्रीम श्री दर्शन विशुद्धयादि षोड़श कारणानि
अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीम श्री दर्शन विशुद्धयादि षोड़श कारणानि
अत्र सन्निहितानि भवत भवत वषट् सन्निधीकरणम्।।

अष्टक

उत्तम जल ले कनक झारी में, तुव चरणन में अरपों।
जन्म जरा मृत रोग निवारौ, इसी हेतु मैं अरचों।।
सोलह कारण भावन भावत, चरण कमल ढिंग आय।
नाथ करो भव पार सो हमको, देकर चरण सहाय।।
ॐ ह्रीम श्री दर्शन विशुद्धयादि षोड़श कारणेभ्यो, जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

मलयागिर चन्दन को घिसकर, केशर संग मिलाऊं।
भवताप मेटन के कारण, जिनवर चरण चढ़ाऊं ।। सोलह कारण --- ।।

ॐ ह्रीम श्री दर्शन विशुद्धयादि षोड़श कारणेभ्यो,
ताप विनाशनाय चन्दनम् निर्पामीति स्वाहा।।
उत्तम अक्षत पुंज धरूं मैं, शशि द्युति जीवन हारे।
अक्षय पद तुम देहु दयाकर, त्रिजग जीव रखवारे।।
।। सोलह कारण --- ।। अक्षतम् नि0 स्वाहा।।

नाना रंग के पुष्प सुप्रासुक, भैंट धरें तुम आगैं।
काम वाण को भैंट हमारे, यही दाम हम मांगैं।।
।। सोलह कारण --- ।। पुष्पम् नि0 स्वाहा।।

उत्तम षट्रस व्यञ्जन लेकर, चरण समर्पण लाये।
क्षुदा रोग अब नाशहु स्वामी, इसी हेतु गुण गाये।।
।।सोलह कारण --- ।। नैवेद्यम् नि0 स्वाहा।।

मणिमय दीपक लाय चरण ढिंग, कर आरति गुण गाऊं।
मोह महातम नाश करो मम, ज्ञान सम्पदा पाऊं।।
।।सोलह कारण --- ।। दीपम् नि0 स्वाहा।।

धूप दशांगी खेऊं अगनि में, कर पूजा गुण गाऊं।
अष्ट करम को नाश करो अब, अष्ट सुगुण निधि पाऊं।।
।। सोलह कारण---।। धूपम् नि0 स्वाहा।।

उत्तम फल बादाम आदि बहु, लेकर चरण चढ़ाऊं।
जन्म जरा भय नाश करो मम, मोक्ष महा फल पाऊं।।
।। सोलह कारण---।। फलम् नि0 स्वाहा।।

जल गंधाक्षत अष्ट द्रव्य ले, अर्घ बनाय चढ़ाऊं।
उत्तम पद निर्वाण मिले बस, यही भावना भाऊं।।
।। सोलह कारण---।। अर्घ्यम् नि0 स्वाहा।।

प्रत्येकार्घ

1- व्रत वार गुणाष्टक श्रद्धा, अरु सातिचार सब व्यसन टार।
श्री देवशास्त्र गुरु का श्रद्धान, दर्शन विशुद्धि यह सुख निधान।।
ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्ध्ये अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

2- जो विनय, वचन, मन, काय तीन, रत्नत्रय धारे प्रवीण।

अरु तपाचार में लीन सोय, ताही के गुण दूजा विनय होय।।
ॐ ह्रीं विनय सम्पन्नतायै अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

3- व्रत पंच व सप्त जु शील होय, नहिं दोष जहां लवलेश कोय।
नित आत्म अनुभव दृष्टि रहे, परमातम पद में चित्त रहे।।
ॐ ह्रीं शील व्रते स्वनतीचारायार्घ्यं नि0 स्वाहा।।

4- नित योग्य काल में पाठ करे, नित ध्यानों का अभ्यास करे।
नित शास्त्र मनन उपदेश करे, सो नित्य ध्यान ज्ञान उपयोग धरे।।
ॐ ह्रीं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगयार्घ्यं नि0 स्वाहा।।

5- नहिं पुत्र मित्र से प्रीति धरे, नहिं विषय भोग में चित्त धरे।
नित भाव उदास स्वरूप रहे, ताही के मन संवेग बहे।।
ॐ ह्रीं अभीक्ष्ण संवेगायार्घ्यं नि0 स्वाहा।।

6- नित शक्ति प्रमाण जो दान करे,
नित पात्र विषैं बहु भक्ति धरे।
नित त्यागहि को कर्तव्य गिने,
नित त्याग भाव की वृद्धि करे।।
ॐ ह्रीं शक्ति तप्त्यागायार्घ्यं नि0 स्वाहा।।
7- तप द्वादश विध जो नित्य करें,
अरु तप ही को नर देह धरें।
नहिं शक्ति होय तो भक्ति करें,
अरु चित्त माहिं अति प्रीति भरें।।
ॐ ह्रीं शक्ति तस्तप से अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

8- नहिं रोग मरण भय भीत होय,
नहिं राग द्वेष में चित्त होय।
नहिं सप्त भयों का लेश कोय,
ताही के साधु समाधि कोय।।

ॐ ह्रीं साधु समाधयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

9- कुष्ठोदर अथवा शूलवात,
अरु स्वांस कास पक्षा सु घात।
इनसे पीड़ित मुनिराज होय,
अथवा कोई साधर्मि होय।।
औषधि अथवा आहार पथ्य,
शुश्रूषा सेवा टहल सत्य।
नित करें भक्ति से भाव युक्त,
ते लहें शीघ्र ही अचल मुक्ति।।
ॐ ह्रीं वैयावृत्य करुणायार्घ्यं नि0 स्वाहा।।

10- जिनराज विषें लवलीन रहे,
मन वचन काय से ध्यान करे।
नहिं अन्य कार्य की चाह रहे,
तहँ अरहंत भक्ति प्रकाश रहे।।
ॐ ह्रीं अर्हद भक्तयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

11- श्री आचारज परमेष्ठी सार,
तिनकी नित पूजा नमस्कार।
नित कीजे तिनकी भक्ति शक्ति,
उत्कृष्ट यही आचार्य भक्ति।।
ॐ ह्रीं आचार्य भक्तयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

12- जो वाणी श्री जिनराज द्वार,
प्रगटी सब तत्व प्रकाश कार।
उसका जो करते पठन-पाठ,
उनमें हो भक्ति सदा अगाध ।।
ॐ ह्रीं बहुश्रुत भक्तयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

13- षट् द्रव्य और नव ही पदार्थ,
इनका जो कथन करे यथार्थ।
उसका जिन प्रवचन सु नाम जान,
उसमें मम नित भक्ति रहे महान।।
ऊँ ह्रीं प्रवचन भक्तयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

14- प्रतिमण प्रथम अरु काय क्लेश,
समता अरु वंदन शुद्ध वेश।
जिन स्तुति अरु स्वाध्याय करे,
सो षट् आवश्यक कार्य करे।।
ऊँ ह्रीं आवश्यका परिहाणयेअर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

15- पूजा अभिषेक क्रिया विशेष,
जिन वचन प्रकाशन निरवशेष।
जहँ होवे नित उसको पिछान,
सन्मार्ग प्रभावन सो महान।।
ऊँ ह्रीं सन्मार्ग प्रभावनाये अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

16- जो रत्नत्रय से युक्त होंय,
जिनके गुण शील ही मुख्य होय।
तिन गुणी जनों में प्रेम जोय,
सोई प्रवचन वात्सल्य होय।।
ऊँ ह्रीं प्रवचन वात्सल्यायर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

समुच्चयार्घ

इम षोडश भावन भाव धरे,
अरु रात्रि दिवस अभ्यास करे।

स्वर्गादिक के ते सौख्य भोग,
तीर्थंकर पदवी लहें योग ।।
ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्ध्यादि षोडशकारण भावनाभ्यो अर्घं नि0 स्वाहा।।

अथ जयमाला

सोरठा- षोडश कारण भाय, तीर्थंकर पद पाय के।
पावे पद निर्वाण, सौख्य अनंतानंत मय।।

1- कब दर्शन विशुद्धि मम होवे,
कब सब पर समदृष्टी होवे।
कब आपा परभेद सु जानूं,
कब निज अनुभव आप सु मानूं।।

2- कब रत्नत्रय विनय प्रकाशे,
कब निज आतम बोध विकाशे।
मन वच काय शुद्धि कब होवे,
कब सर्वाङ्ग विनय गुण होवे।।

3- कब कुशील तज शील सुधारूं
कब मैं निर्मलता विस्तारूं।
कब श्रावक मुनि के व्रत पालूं,
कब निज आतम रूप सम्हालूं।।

4- नित हो मेरे शास्त्राभ्यास,
होवे जिससे ज्ञान प्रकाश।
मेरी परिणति ऐसी होवे,
ज्ञान विमुख नहिं आतम होवे।।

5- पुत्र मित्र धन धान्यादिक से,
हो वैराग्य सदा मम - पर - से।

इन्द्रिय विषय क्षणिक सुखदाता,
मेरा इनसे फिर क्या नाता।।

6- शक्तयनुसार त्याग नित होवे,
लोभ पाप का बाप न होवे।
त्रिविध पात्र को त्रिविध योग से,
दान सदा ही करूं प्रेम से।।

7- द्‌वादश तप आतम हितकारी,
तप ही काटै विपदा सारी।
संचित कर्म-दहन-हित-ज्वाला,
शिव सुख को यह देने वाला।।

8- कब हो मेरे सो तप धारण,
ये ही है जग भ्रमण निवारण।
हाय हाय मैं पापी भारी,
इससे शक्ति न तप की धारी।।

9- रहे भावना ऐसी मेरी,
प्रगटै तप की शक्ति घनेरी।
मरण और उपसर्ग जु होवे,
इष्ट वियोग कभी न होवे।।

10- भय न कभी तब मेरे होवे,
यह शुभ साधु समाधि सु होवे।
आधि व्याधि से पीड़ित जो हों,
रोग शोक जिनको कुछ भी हों।।

11- उनकी वैयावृत्त्य करूं मैं,
जग उपकारी कार्य करूं मैं।

निज सम पर के दुख मैं जानूं,
पर हित ही निज ध्येय सुमानूं।।

12- निश्चय नय से मेरा रूप,
है अरहंत समान स्वरूप।
सो अरहंत भक्ति मम होवे,
जिससे फिर भव-भ्रमण न होवे।।

13- जब लों नहिं आचार्य रूप हो,
तब लों उनका गुण सुमरण हो।
मेरी परिणति उनके सम हो,
यही भावना मन में नित हो।।

14- इस पंचम कलि काल मंझारा,
जिनवाणी अमृत रस धारा।
वस्तु स्वरूप दिखावन-हारी,
उसमें हो नित भक्ति हमारी।।

15- प्रवचन भक्ति सदा मम होवे,
प्रवचन अनुमत वचन सु होवे।
स्व-पर-भेद जिससे नित दीखै
उसको ही हम निशि दिन सीखैं।।

16- षट् आवश्यक कब मैं धारि,
नित उनका ही भेद विचारूं।
कर्म जाल से होऊं विमुक्त,
बनूं आत्म गुण गण से युक्त।।

17- तीन जगत में जिन वृष सार,
सर्व जीव को है हितकार।

कैसे उसका होय प्रचार,
कब सब जन उसको लें धार।।

18- प्रवचन धारक जे जन जग में,
गौरव उनका है शिव मग में।
कब प्रवचन वात्सल्य सु होवे,
कब समता शिव सुखमय होवे।।

19- ये हैं षोडश कारण भावन,
भावें जिनको समयक्ती जन।
भविक मोर जन को जो जलधर,
होते वे इससे तीर्थंकर।।
ऊँ ह्रीं दर्शन विशुद्ध्यादि षोडशकारण भावनायें
अनर्घ्य पद प्राप्तयेङर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
षोङश कारण भावना, निज हित साधन हेत।
पढ़ै सुनैं भावै सदा, पावै शिवपुर खेत।।
।। इत्यादि आशीर्वाद ।।

उत्तराध्ययन का दशम अध्ययन

1- द्रुम पत्ते पीले पड़े, गिरें समय को पाय।
त्यों जीवन नर देह का, गौतम समय सु जाय।।

2- ज्यों कुशाग्र से ओस जल, क्षण में ही झड़ जाय।
त्यों जीवन नर देह का, गौतम समय सु जाय।।

3- जीवन विघ्नों से भरा, आयु बीतती जाय।
संचित विधि (रज/दूरी) करो, गौतम समय सु जाय।।

4- सभी प्राणी के कठिन है, यह मानुष पर्याय।
महा कठिन विधि बंध है, गौतम समय सु जाय।।

5- धरा काय में तुम बसे, काल असंख्य सु पाय।
मत प्रमाद अब तुम करो, गौतम समय सु जाय।।

6- सलिल काल में तुम बसे, काल असंख्य सु पाय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

7- तेज काय में तुम बसे, काल असंख्य सु पाय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

8- वायु काय में तुम बसे, काल असंख्य सु पाय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

9- हरित काय में तुम बसे, काल अनन्त सु पाय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

10- काल संख्यात तो तुम बसे, पा दो इन्द्रिय काय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

11- संख्यात काल तो तुम बसे, पा त्रि इन्द्रिय काय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

12- संख्यात काल तो तुम बसे, पा चउ इन्द्रिय काय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

13- सात आठ भव तुम बसे, पा पंचेन्द्रिय काय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

14- एक एक भव ही रहे,देव नरक के मांय।
मत प्रमाद गौतम करो, समय बीतता जाय।।

15- ऐसे इस संसार में, कर्म शुभाशुभ पाय।
भ्रमण किया परमाद वश, गौतम समय सु जाय।।

16- आर्य पना अति कठिन है, पा मनुष्य पर्याय।
भरे मलेच्छ चण्डाल बहु, गौतम समय सु जाय।।

17- दुर्लभ सकलेन्द्रियपना उत्तम कुल सु पाय।
दिखें बहु विकलेन्द्रिय, गौतम समय सु जाय।।

18- सु धर्म श्रवण अति कठिन है, सकलेन्द्रिय को पाय।
दिखें कुतीर्थी जन बहुत, गौतम समय सु जाय।।

19- श्रद्धा अति ही कठिन है, धर्म श्रवण भी पाय।
मिथ्यात्वी बहु जन दिखें, गौतम समय सु जाय।।

20- वृष सेवन अति कठिन है, श्रद्धा को भी पाय।
दिखें विषय काम मूर्च्छित बहुत, गौतम समय सु जाय।।

21- पांडुर केश सु हो रहे, जीर्ण तेरी काय।
श्रोत्रेन्द्रिय बल घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

22- केश जु पांडुर हो रहे, जीरण तेरी काय।
नेत्रेन्द्रिय बल घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

23- पांडुर केश सु हो रहे, जीर्ण तेरी काय।
घ्राणेन्द्रिय बल घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

24- पांडुर केश सु हो रहे, जीर्ण तेरी काय।
रसनेन्द्रिय बल घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

25- पांडुर केश सु हो रहे, जीर्ण तेरी काय।

तनु बल तेरा घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

26- पांडुर केश सु हो रहे, जीर्ण तेरी काय।
सर्वेन्द्रिय बल घट रहा, गौतम समय सु जाय।।

27- फोड़ा फुन्सी ज्वर तथा, रोग बहुत उपजांय।
नष्ट-भ्रष्ट तब काय हो, गौतम समय सु जाय।।

28- शारद-पंकज-जल यथा, बंधु स्नेह कहाय।
सबसे तजहु स्नेह को, गौतम समय सु जाय।।

29- तज धन नारी पुत्र को, हो दीक्षित मुनि राय।
वमित वस्तु को मत पिओ, गौतम समय सु जाय।।

30- मित्र बन्धु को छोड़ औ, धन संचय अधिकाय।
द्वितीय बार मत ढूढ़ तूं, गौतम समय सु जाय।।

31- मिथ्यात्वी बहु जन दिखें, जिन नहिं आज दिखाय।
वाद विवादी बहु खड़े, गौतम समय सु जाय।।

32- शोध कंटका कीर्ण पथ, शोधित मार्ग सु जाय।
शिव आलय तब ही मिले, गौतम समय सु जाय।।

33- अबल भार वाही यथा, विषय मार्ग मत जाय।
फिर पीछे पछतायेगा, गौतम समय सु जाय।।

34- तिर कर महा समुद्र को, ठहरे तीर सु आय।
कर जल्दी हो पार ज्यों, गौतम समय सु जाय।।

35- तज गुण श्रेणी परंपरा, सिद्ध लोक को जांय।
शिव सुख अनुपम है जहां, गौतम समय सु जाय।।

36- शुद्ध बुद्ध बन विचर तूं, नगर ग्राम में जाय।
बढ़ा शान्ति का मार्ग नित, गौतम समय सु जाय।।

37- शब्द अर्थ से युक्त यह, सुन जिन का व्याख्यान।
राग द्वेष को तज गये, गौतम मुनि निर्वाण।।

श्री नियमसार का पद्यानुवाद

1- नम कर वीर जिनेश कूं, जो अगनित गुण पिण्ड।
नियमसार भाषा कहूं, केवलि कथित अखण्ड।।

2- जिनका शासन दुविध है, मार्ग मार्ग फल रूप।
मोक्ष उपाय सो मार्ग है, फल है मोक्ष स्वरूप।।

3- करने जो योग्य वह, नियम कहा भगवान।
दर्शन ज्ञान चरित्र मय, सार धर्म का मान।।

4- मोक्ष हेतु तो नियम है, फल उसका निर्वान।
सो तीनों का अब कथन, करता हूं सुखदान।।

5- श्रद्धा से समकित कहा, देव शास्त्र तत्वार्थ।
सर्व दोष से रहित जो, जो सच्चा देव परमार्थ।।

6- राग द्वेष मद मोह भय, निद्रा चिन्ता शोक।
इत्यादिक कोई दोष नहिं, हैं केवल गुण थोक।।

7- इन सब दोषों से रहित, गुण अनन्त से युक्त।
सो निश्चय परमात्मा, हैं कुवेद इन मुक्त ।।

8- सत्य देव से जो कथित, रहित दोष से सर्व।
ऐसे आगम से कथित, कहलाते तत्वार्थ।।

9- पुद्गल जीव अधर्म नम, काल धर्म षट् जान।
नाना गुण पर्याय युत, तत्वारथ पहिचान।।

10- जीव कहा उपयोगमय, दर्शन ज्ञान स्वरूप।
कहा स्वभावी ज्ञान इक, दुतिय विभाव स्वरूप।।

11- केवल इन्द्रिय से रहित, जानै सब असहाय।
स्वाभाविक सत ज्ञान वह, क्षायिक है सुखदाय।।

12- वैभाविक के भेद दो, सत् अरु असत् बखान।
सत् के भेद भी चार हैं, मत, श्रुत, अवधि, निदान।।

13- चौथा मन पर्यय कहा, क्षायोपशम ये चार।
असत् ज्ञान के कुमति श्रुत और विभंग विचार।।

14- सो दर्शन उपयोग यह, दुविध स्व पर के भेद।
केवल इन्द्रिय रहित जो, लखे सो पहिला भेद।।

15- चक्षु अचक्षु अवधि ये, दर्शन तीन विभाव।
दो विध है पर्यय ये, पर संगी स्व स्वभाव।।

16- नर नारक पशु देव ये, पर संगी पर्याय।
कर्म संग से रहित जे, ते स्वभाव कहलाय।।
17- मनुष्य भोग सुभूमियां, कर्म भूमि वा जान।

सत प्रकार के नारकी, नरक भेद पहिचान।।

पंचाध्यायी के नय प्रकरण का दोहानुवाद

श्री वीतरागाय नमः

।। मंगलाचरण ।।

1- महावीर जिन को नमूं, जिन के वचन प्रताप ।
सर्व अर्थ का ज्ञान हो, मिट जावे भव ताप ।।

2- तीर्थंकर तेवीस जे, सो समान गुण धार ।
भक्ति भावना से करूं, नमस्कार शतबार ।।

3- अनादि निधन जगवंद्य जो, जिन शासन निर्दोष ।
कुमति वैरि को अग्नि ज्यों, दाहै करके शोष ।।

4- कुन्द कुन्द को आदि दे, जो अनेक मुनि वृन्द ।
पाद पद्म तिनके नमूं, प्रगटे ज्ञान अमन्द ।।

(504) ।। ग्रन्थ प्रारम्भ ।।

5- सत् लक्षण है अर्थ का, एक अनेक स्वरूप ।
दोनों को जो जानता, वह प्रमाण सुखरूप ।।

6- उनमें से जो एक का, वाचक धर्म स्वरूप ।

वक्ता का अभिप्राय जो, वह नय का लख रूप ।।

(505)

7- भेद नयों के दो कहे, मुख्य रूप जिनराय ।
पहला तो है द्रव्य नय, दूजा भाव कहाय ।।

8- पुद्गल मय जो शब्द है, बोले जावें जोय ।
बने जो भाषा वर्गणा, द्रव्य रूप नय सोय ।।

9- चेतन गुण मय भाव नय,जो है ज्ञान स्वरूप ।
वस्तु अंश को विषय कर, बतलावे सतरूप (सत्ता रूप) ।।

(506)

10- अथवा ज्ञान विकल्प मय, नय का लक्षण जान ।
वह विकल्प भी ज्ञान का, अपरिमार्थ पहिचान ।।

11- क्यों कि शुद्ध जो ज्ञान गुण, नय कैसे कहलाय ।
शुद्ध ज्ञेय भी इस तरह, नय कैसे कहलाय ।।

12- किन्तु ज्ञान अरु ज्ञेय, इन दोनों के संयोग ।
कहा जाय नय इसलिए, अपरमार्थ नय योग ।।

(507) ।। स्पष्ट विवेचन ।।

13- नय है ज्ञान विकल्प जो, कहा जिसे नय रूप ।
उसमें भी यह प्रक्रिया, लगा समझ नय रूप ।।

14- ज्ञान तो ज्ञान स्वरूप है,ज्ञान न नय के रूप ।
जो नय है वह ज्ञान नहिं, नय है विकल्प रूप ।।

15- कहने का सारांश यह, शुद्ध ज्ञान नय नाहिं ।
किन्तु पर विकल्प मय ज्ञान जो, नय सो ही कहलाहिं ।।

(508)

16- होय विवक्षा (इच्छा) जिस समय,कोई विकल्प स्वरूप ।
परगट होता तिस समय, नय भी पक्ष स्वरूप ।।

17- हो न विवक्षा जिस समय, कोई विकल्प स्वरूप ।
हो न परगट तिस समय, नय का कोई रूप ।।

(509)

18- इसी विषय में तो कहा,घट दृष्टांत स्वरूप ।
जो घट को ज्ञान जो, कहलावे घट रूप ।।

19- पर वह है उपचार से,नहिं वह वास्तव रूप ।
ज्ञान ज्ञान मय ही रहे, घट घट के ही रूप ।।

20- क्यों कि ज्ञान घट होय नहिं, होय न घट भी ज्ञान ।
अपने अपने रूप में, रहते दोनों जान ।।

(510)

21- कहने का तात्पर्य यह,जानो निश्चय रूप ।
जितना भी है विकल्प मय, नय वह हेय स्वरूप ।।

22- यहँ पर शंका होय यह, जो विकल्प नय होय ।
किया जाय फिर क्यों कथन, बतलाओ यह मोय ।।

उत्तर-

23- यद्यपि कहना ठीक यह,आवश्यक पन सोय ।
क्यों कि वली के सदृश नय, परिवर्तित वह होय ।।

।। भावार्थ ।।

24- विकल्पमय नय अर्थ का, कह न सके सर्वांश ।
क्यों कि विषय नय का कहा, भेद रूप एकांश ।।

25- इसीलिए वह हेय है,कहा नहीं आदेय ।
तदपि बिना उसके कहे, हो न ज्ञान भी ज्ञेय ।।

26- अर्थ व्यवस्था के लिए, नय का किया विचार ।
आवश्यक तब कथन है,जान लेय यह सार ।।

(511) ।। नय मात्र विकल्पात्मक है ।।

27- जितने भी नय वाद हैं, सब हैं विकल्प रूप ।
इसी बात का इस समय, रखते स्पष्ट स्वरूप ।।

28-जैसे कोई पुरुष ने, सब विकल्प से हीन ।
सत् सामान्य स्वरूप का, केवल ज्ञान सु कीन ।।

29-पर उसका भी ज्ञान वह, नहिं विकल्प से हीन ।
क्यों कि सत् इस रूप का, हुआ विकल्प प्रवीन ।।

30-दुर्निवार विकल्प वह, हो न ज्ञान से दूर ।
सत् यह अंश पदार्थ का, अर्थ गुणों का पूर ।।

(512)

31-कथन होय विस्तार से, हो या सूक्ष्म रूप ।
बाहिर जो कुछ बोलना, या आभ्यन्तर रूप ।।

32-वचन मयी सब जानिए, और वही नय रूप ।
क्यों कि वचन मय कथन जो, वह नय द्रव्य स्वरूप ।।

33-वचन जनित जो ज्ञान है, वह नय भाव स्वरूप ।
जितना वचन-विलास है, लख वह नय का रूप ।।

(513)

34-वस्तु अनन्ते धर्म मय,यह निश्चित ही जान ।
उसमें एक एक धर्म को, लख विशिष्ट गुणवान ।।

35-उसी रूप संज्ञान करे,'अमुक' वस्तु वह जान ।
सो भी नय व्यवहार है, वह विकल्प मय मान ।।

36- संज्ञा मय जे वचन हैं, ते नय हैं उपचार ।
शब्द जनित जो ज्ञान है, वह नय भाव विचार ।।

514- ।। दृष्टान्त ।।

37- उष्णपना लख अग्नि का, वचन कहा जन कोय ।
'अग्नि उष्ण है'- बात यह, वचन रूप नय होय ।।

38- वचन जनित जो ज्ञान है,नय विकल्प वह जान ।
क्यों कि वस्तु का अंश इक, दर्शाता वह ज्ञान ।।

39- परकाश न दीप न दहन, पाचन ताप न ज्वाल ।
बहु तेरे गुण होत हैं, अग्नि में सब काल ।।

40- किसी विवक्षित धर्म से, कहें किन्तु जिस काल ।
तत् प्रमाण उस रूप वह, कहलाता तिस काल ।।

41- इसी तरह जब जीव को, ज्ञानी कहें विचार ।
बहु गुण के रहते हुए, दिखै ज्ञान मय सार ।।

(515)-

42- छेदन क्रिया के विषैं, फरसा होय स्वतंत्र ।
त्यों स्वतंत्र नय है नहीं, किन्तु अर्थ-परतंत्र ।।

43- कहने का सारांश यह, परशु करे निज काज ।
तब न अपेक्षा अन्य की, रहती उसे कदा च ।।

44- पर त्रयो नय का कभी, होता नहीं स्वतंत्र ।
प्रति पक्षी सापेक्ष वह, होता सदा निशंक ।।

45- क्यों कि अपेक्षा से रहित, होवे कोई प्रयोग ।
मिथ्या नय वह जानिए, ऐसा है नय योग ।।

516 ।। नय के भेद ।।

46-जितने भी नय वाद हैं, सब ही हैं एक रूप ।
विकल्प सभी का हेतु हैं, (जो) एक सामान्य स्वरूप ।।

47-विषय भेद से इसी तरह, नय के हैं दो भेद ।
विकल्प उसका हेतु है, उसके भी दो भेद ।।

48-ज्ञायक के तो भेद से, होय ज्ञेय में भेद ।
सो विकल्प जब दोय हों, तब दो नय के भेद ।।

(517)

।। अब नय के दो भेदों के नाम बतलाते हैं ।।

49-द्रव्यार्थिक नय प्रथम है, पर्यायार्थिक दूसरा जान ।
सभी नयों के मूल से, नय दोनों ही मान ।।

50-दोनों से ही होत है, सभी ज्ञेय का ज्ञान ।
इसीलिए संक्षेप से, दो का किया बखान ।।

(518)

।। द्रव्यार्थिक नय का स्वरूप ।।

51-केवल जाने द्रव्य को, सत् सामान्य स्वरूप ।
मुख्य अर्थ जिसका कहा, धातु अर्थ अनुरूप ।।

52-पर्याय विवक्षा जहँ नहीं, रहे मुख्य जहँ द्रव्य ।
द्रव्यार्थिक वह जानिए, भेद नहीं जहँ मुख्य ।।

(519)

।। पर्यायार्थिक नय ।।

53-कहा अंश पर्याय को, धर्म कहावे सोय।

उनमें से जिस अंश की, कथन विवक्षा होय ।।

54- वही अंश जो विषय कर, दर्शावै पर्याय ।
पर्यायार्थिक नय वही, भेद अनेक बताय ।।

55- कहने का सारांश यह, पलटै क्षण क्षण द्रव्य ।
पर वे सब ही अंश हैं, द्रव्यों के ही सत्य ।।

56- जाने जिस जिस काल में, जो जो अंश नवीन ।
सो पर्यायार्थिक सकल, नय के भेद प्रवीन ।।

(520)

।। नयों के विशद स्वरूप कहने की प्रतिज्ञा ।।

57- अब उन दोनों नयों का, दे के बहु दृष्टान्त ।
कथन विशेष स्वरूप का, करते हैं बहु भांत ।।

58- सुने हुए के सदृश्य ही, होता जिससे ज्ञान ।
अथवा अनुभव के सदृश्य, परगट होता ज्ञान ।।

(521)

।। पर्यायार्थिक नय का विचार ।।

59- पर्यायार्थिक नय कहो, या कह लो व्यवहार ।
अर्थ सभी का एक है, सब प्रधान उपचार ।।

60- निश्चय से तो अर्थ है, एक अभिन्न स्वरूप ।
पर कहता यह भेद मय, सो व्यवहार स्वरूप ।।

(522)

61- किसी वस्तु के भेद के, करने को व्यवहार ।
कहत किन्तु शब्दार्थ से, वह असत्य विचार ।।

62-जैसे सत् सामान्य है, सदा अभिन्न अखण्ड ।
पर यह गुण है यह गुणी, करता भेद प्रचण्ड ।।
(523)

63-सत् का गुण सामान्य हो, अथवा होय विशेष ।
होय विवक्षित जिस समय, विषय उसी का लेख ।।

64-क्यों न भेद व्यवहार का, विषय महान सुजान ।।
ज्ञान करावे भेद मय, वह व्यवहार पिछान ।।

।। शंका ।।

65-होती शंका यह यहां, भेद करे व्यवहार ।
सत्य निरूपक जब नहीं, तब क्यों करो विचार ।।

66-**उत्तर-** उत्तर उसका जान यह, करत बहुत उपकार ।
इससे आस्तिक बुद्धि हो, गुण अनन्त मझार ।।

67-अनन्त गुणों मय धर्मि जो, उसका होता ज्ञान ।
और गुणों के ज्ञान से, जानें द्रव्य महान ।।

68-भरे रूप ही कह सकें, किसी वस्तु का अंश ।
नहीं कभी कोई कह सके, एक वस्तु सर्वांश ।।

69-बिन माने व्यवहार के, हो न जरा भी ज्ञान ।
इसीलिए व्यवहार का, करें कथन गुणवान ।।

(525)

।। व्यवहार नय के भेद ।।

70-दोय भेद व्यहार के, जिनवर भाषित मान ।
पहला तो सद्भूत सो, वस्तु गुणों का जान ।।

71-नाम जो यह सद्भूत सो, वस्तु गुणों का जान ।
प्रवृत्ति करावे वस्तु में, सो व्यवहार पिछान ।।

72-करे विवेचन वस्तु गुण, सो है यह यथार्थ ।
करे भेद पर अखंड में, सो जानो अयथार्थ ।।

(526)

।। सद्भूत व्यवहार नय की प्रवृत्ति का हेतु है ।।

73-व्यवहारिक परवृत्ति का, कारण सदभूत जान ।
'सत्' का जो है विशेष गुण, करता उसका ज्ञान ।।

74-अथवा यों भी कह सकें, जो सत् गुण सामान्य ।
तिसे न विवक्षित करत है, विशेष से है मान ।।

75-नहीं कभी यह बात है, दोनों में से एक ।
चाहे जिस को जान कर, उसका करे विवेक ।।

76-किन्तु गौण सामान्य कर, लखे विशेष स्वरूप ।
इस नय का ये ही विषय, समझ लेय नय रूप ।।

(527)

।। अब इस नय का फल बतलाते हैं ।।

77-पर पदार्थ में करत यह, बुद्धि निषेधक सार ।
फल सद्भूत व्यवहार का, यह होय विचार ।।

78-पर यह एक पदार्थ में, गुण भेदक नहिं जान ।
(भेद दिखाना अन्य से, इसका यह फल मान)
पर पदार्थ से भेद को, दिखलाना फल मान ।।

79-जैसे जिय का ज्ञान गुण, किया विषय नय येह ।

पुद्गलादि से भिन्न सो, दिखलाता नय येह ।।

(528)

।। बस यही इस नय का फल है- ऐसा दिखाते हैं ।।

80- उक्त प्रकार यथार्थ से, होता है जब ज्ञान ।
तब सब संकर दोष बिन, होय अखंडित ज्ञान ।।

81- बहुत धर्म इक साथ जब, मिलें परस्पर माहिं ।
संकर दूषण जान वह, पर यह भिन्न दिखाहिं ।।

82- शून्य दोष भी वस्तु में, आता नहिं इस भांति ।
क्यों कि अनन्ते गुणों की, सत्ता होती ज्ञात ।।

83- अणु समान सब वस्तुएं, भिन्न भिन्न दर्शाय ।
दिखै उसी का यह शरण, यों अखण्ड दिखलाय ।।

(529)

।। असद्भूत व्यवहार नय का स्वरूप ।।

84- पर द्रव्यों के गुणों को, पर में जो दिखलाय ।
बल पूर्वक हो खींचना, जिसका होय स्वभाव ।।

85- असद्भूत व्यवहार सो, नय को लेय पिछान ।
असत् रूप ही वस्तु को, दिखलाती यह जान ।।

(530)

।। दृष्टान्त ।।

86- रूपादिक संयुक्त जो, मूर्तिक पुद्गल जान ।
उससे मूर्तिक कर्म ही, पैदा होते मान ।।
87- उसके ही संयोग से, जीव विषें तूं जान ।
क्रोधादिक उत्पन्न हों, सो भी मूर्तिक मान ।।

(531)

।। इसी का दृष्टान्त कहते हैं ।।

88-आभ्यन्तर जो द्रव्य के, उपजी पर से मान ।
उस वैभाविक शक्ति को, कारण इसका जान ।।

89-जीव और पुद्गल विषें, वह स्वाभाविक जान ।
और द्रव्य में होत नहिं, वस्तु स्वभाव सो मान ।।

(532)

।। अब इसका फल बतलाते हैं ।।

90-जीव विषें क्रोधादि जे, ते वैभाविक जान ।
आये हुए जो कर्म हैं, तिन से उपजे मान ।।

91-सो विभाव को छोड़ जो, लखे शुद्ध निज रूप ।
समझ उनही को आत्म का, श्रद्धा करे अनूप ।।

92-बनता सम्यग्दृष्टि है, इन भावों से जीव ।
फल इसका यह जान कर, आतम रस को पीन ।।

(533)

।। दृष्टान्त ।।

93-इसमें यह दृष्टान्त है, पात रूप ज्यों स्वर्ण ।
पर पर-गुण संयोग से, दिखता पाणडुर वर्ण ।।

94-वह पर-गुण जब दूर हो, स्वर्ण दिखे तब शुद्ध ।
त्यों ही वैभाविक बिना, दिखता आतम शुद्ध ।।

(534)

।। सद्भूत - असद्भूत के भेद ।।

95- दोय रूप सद्भूत है, असद्भूत द्वय रूप ।
अनुपचरित सद्भूत इक, उपचरित सु दूजा जान ।।

96- अनुपचरित उपचरित के, भेदों से नय रूप ।
असद्भूत उपचरित इक, अनुपचरित पर मान ।।

(535)

।। अनुपचरित सद्भूत व्यवहार नय का स्वरूप ।।

97- सर्व पदारथ के विषें, रहती है इक शक्ति ।
जो सामान्य स्वरूप है, सर्व गुणों की भित्ति ।।

98- विशेष अपेक्षा से रहित, उसको जाने जोय ।
अनुपचरित सद्भूत मय, व्यवहारिक नय सोय ।।

(536)

।। इसी को दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं ।।

99- जैसे आतम का कहा, अनुजीवी गुण ज्ञान ।
रखे अपेक्षा जीव की, साथ जीव के जान ।।

100- जाने वह जब ज्ञेय को, होय न ज्ञेय उपजीवि ।
जाने कोई पदार्थ पर, रहे जीव अनुजीवि ।।

101- कहने का सारांश यह, जाने कोई वस्तु ।
पर आतम के संग रहे, सो अनुजीवि कहन्त ।।

।।----------------------।।